[2018] 14 एस.सी.आर. 755

निपुण सक्सेना एवं अन्य

बनाम

भारत संघ एवं अन्य

(रिट याचिका (सिविल) संख्या 565/2012)

11 दिसंबर, 2018

[मदन बी लोकुर और दीपक गुप्ता, न्यायमूर्तिगण]

दंड संहिता, 1860 - धारा 228 ए - यौन अपराधों के पीड़ित - उनकी पहचान की सुरक्षा - जारी किए गए निर्देश - माना गया: कोई भी व्यक्ति पीड़ित का नाम नहीं छाप सकता या प्रकाशित नहीं कर सकता या कोई तथ्य प्रकट नहीं कर सकता जिससे पीड़ित की पहचान हो सके और जिससे उसकी पहचान आम जनता को पता चल सके - महिलाओं के खिलाफ बलात्कार के अपराध से संबंधित एफआईआर की प्रति सार्वजनिक डोमेन में नहीं डाली जाएगी - सत्र न्यायाधीश/मजिस्ट्रेट/विशेष न्यायालय लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों और पीड़ित के हित को ध्यान में रखते हुए एफआईआर की प्रति किसी व्यक्ति (व्यक्तियों) को देने की अनुमति दे सकता है - जिन अधिकारियों को नाम का खुलासा किया जाता है, वे भी पीड़ित का नाम और पहचान गुप्त रखने के लिए बाध्य हैं और रिपोर्ट को छोड़कर किसी भी तरीके से इसका खुलासा नहीं करना चाहिए जिसे केवल जांच एजेंसी या अदालत को सीलबंद लिफाफे में भेजा जाना चाहिए - जहां कोई पीड़ित फाइल करता है अपील के लिए, पीड़िता का नाम 'X' या 'Y' दर्शाकर तथा पीड़िता का नाम न बताने के लिए आवेदन देकर अपील दायर की जा सकती है। न्यायालय विवरण की पुष्टि कर सकता है, लेकिन सार्वजनिक डोमेन में रखी गई सामग्री में पीड़िता का नाम नहीं बताया जाएगा। ऐसे मामलों में जहां पीड़िता मर चुकी है या मानसिक रूप से अस्वस्थ है, पीड़िता का नाम या उसकी पहचान उसके निकटतम रिश्तेदार की अनुमति के बिना भी नहीं बताई जानी चाहिए, जब तक कि उसकी पहचान बताने के लिए उचित परिस्थितियां न हों, जिसका निर्णय सक्षम प्राधिकारी द्वारा किया जाएगा। ऐसी परिस्थितियां हो सकती हैं, जहां निकटतम रिश्तेदार को पीड़िता की पहचान बताने का अधिकार हो सकता है। यदि ऐसी कोई आवश्यकता उत्पन्न होती है, तो पहचान बताने के लिए अधिकृत करने के लिए आवेदन केवल संबंधित सत्र न्यायाधीश/मजिस्ट्रेट को किया जाना चाहिए, जो कानून के आधार पर आवेदन पर निर्णय

लेंगे। हालांकि, आज तक सरकार ने किसी भी सामाजिक या कल्याणकारी संस्था की पहचान नहीं की है, जिसे निकटतम रिश्तेदार अधिकृत करे। यदि सरकार वास्तव में ऐसा करना चाहती है, तो उसे इस बारे में सूचित किया जाएगा। धारा 228 ए(2)(सी) के तहत, उसे ऐसी सामाजिक कल्याण संस्था या संगठन की पहचान करने से पहले इस संबंध में कुछ नियम या स्पष्ट मानदंड स्पष्ट रूप से निर्धारित करने होंगे - जब तक ऐसा नहीं किया जाता है, तब तक जारी किए गए निर्देश लागू रहेंगे - भारतीय संविधान - अनुच्छेद 142 - दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 327(2)।

यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम, 2012 - धारा 23, 24, 25, 33 और 37 - पोक्सो अधिनियम के तहत अपराध के अधीन बच्चे - अधिकार - माना गया: किसी भी मीडिया में कोई भी रिपोर्ट बच्चे की पहचान का खुलासा नहीं करेगी जिसमें नाम, पता, फोटो, पारिवारिक विवरण, स्कूल, पड़ोस या कोई अन्य विवरण शामिल है जिससे बच्चे की पहचान का खुलासा हो सकता है - पोक्सो अधिनियम के तहत अपराधों से संबंधित एफआईआर को सार्वजनिक डोमेन में नहीं डाला जाना चाहिए - पोक्सो अधिनियम का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि बच्चे की पहचान तब तक उजागर न हो जब तक कि विशेष न्यायालय लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों से इस तरह के प्रकटीकरण की अनुमति न दे - यह प्रकटीकरण केवल तभी किया जा सकता है जब यह बच्चे के हित में हो और अन्यथा नहीं - बिजॉय बनाम पश्चिम बंगाल राज्य में कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा जारी निर्देशों से सहमत हैं - देश के सभी उच्च न्यायालयों की किशोर न्याय समिति के अध्यक्ष और सदस्य कलकत्ता उच्च न्यायालय के फैसले का अध्ययन करेंगे उच्च न्यायालय और उसमें जारी निर्देशों का अनुपालन सुनिश्चित करना तथा प्रत्येक उच्च न्यायालय/राज्य की विशेष आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए समान निर्देश जारी करना - जारी निर्देश - निर्णय को सभी उच्च न्यायालयों के रजिस्ट्रार जनरल को भेजा जाना चाहिए, ताकि उसे उचित आदेश और निर्देश जारी करने के लिए सभी उच्च न्यायालयों की किशोर न्याय समिति के अध्यक्षों के समक्ष रखा जा सके।

शब्द और वाक्यांश – "ऐसा मामला जिससे व्यक्ति की पहचान पता चल सकती है" – अर्थ – माना गया: भारतीय दंड संहिता की धारा 228 ए में वाक्यांश "ऐसा मामला जिससे व्यक्ति की पहचान पता चल सकती है" का केवल यह अर्थ नहीं है कि पीड़ित का नाम उजागर नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि इसका यह भी अर्थ है कि मीडिया में प्रकाशित किसी भी मामले से पीड़ित की पहचान का पता नहीं लगना चाहिए – दंड संहिता, 1860 – धारा 228 ए।

दंड संहिता, 1860 – धारा 228 ए(2)(सी) – यदि नाबालिगों पर लागू हो – निर्णय: जहां पीड़ित नाबालिग है, धारा 228 ए(2)(सी) अब लागू नहीं होगी क्योंकि पोक्सो अधिनियम विशेष रूप से नाबालिगों से संबंधित है – इस प्रकार, सभी उद्देश्यों और प्रयोजनों के लिए 'या नाबालिग' शब्दों को आईपीसी की धारा 228 ए की उपधारा (2) के खंड (सी) से हटा दिया जाना चाहिए।

शब्द और वाक्यांश – "कोई अन्य विवरण" – व्याख्या - माना गया: 2012 अधिनियम की धारा 23(2) में वाक्यांश 'कोई अन्य विवरण' को व्यापक आयाम दिया जाना चाहिए और इसे केवल एक ही श्रेणी का पढ़ा नहीं जा सकता – विधानमंडल का इरादा है कि बच्चे की गोपनीयता और प्रतिष्ठा को नुकसान न पहुंचे – इसलिए, कोई भी जानकारी जिससे बच्चे की पहचान का खुलासा हो सकता है मीडिया द्वारा प्रकट नहीं की जा सकती – यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम, 2012 – धारा 23(2) – विधियों की व्याख्या।

यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम, 2012 - धारा 23 (4) - के तहत अपराध - जब आकर्षित - माना गया: मीडिया न केवल बच्चे की पहचान का खुलासा न करने के लिए बाध्य है, बल्कि कानून द्वारा किसी भी ऐसी सामग्री का खुलासा न करने का आदेश दिया गया है जिससे बच्चे की पहचान का खुलासा हो सकता है - इसका कोई भी उल्लंघन 2012 अधिनियम की धारा 23 (4) के तहत अपराध होगा।

याचिकाओं का निपटारा करते हुए न्यायालय ने

आयोजितः **1.1 भारतीय दंड संहिता की धारा 228 ए की उपधारा (1) में यह प्रावधान है कि कोई भी व्यक्ति जो धारा 376, 376 ए, 376 एबी, 376 बी, 376 सी, 376 डी, 376 डीए, 376 डीबी या 376 ई के अंतर्गत आने वाले किसी अपराध का कथित शिकार व्यक्ति का नाम और पहचान उजागर करता है, वह आपराधिक अपराध करता है और उसे दो वर्ष तक की सजा हो सकती है। कोई भी व्यक्ति जो न्यायालय के समक्ष ऐसे अपराध के संबंध में कार्यवाही से संबंधित कोई भी सामग्री न्यायालय की अनुमति के बिना प्रकाशित करता है, वह अपराध करता है। हालांकि स्पष्टीकरण में यह प्रावधान है कि उच्च न्यायालयों या सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का मुद्रण या प्रकाशन भारतीय दंड संहिता के अर्थ में कोई अपराध नहीं माना जाएगा। [पैरा 9, 10][770-ए-सी]**

1.2 न तो आईपीसी और न ही सीआरपीसी 'किसी व्यक्ति की पहचान' वाक्यांश को परिभाषित करता है। आईपीसी की धारा 228 ए स्पष्ट रूप से "नाम या किसी भी ऐसी बात को छापने या प्रकाशित करने पर रोक लगाती है जिससे व्यक्ति की पहचान का पता चल सकता है"। यह स्पष्ट है कि न केवल पीड़ित के नाम का प्रकाशन प्रतिबंधित है, बल्कि किसी

अन्य बात को प्रकट करने पर भी प्रतिबंध है जिससे पीड़ित की पहचान का पता चल सकता है। "बात जो व्यक्ति की पहचान का पता लगा सकती है" वाक्यांश का अर्थ केवल यह नहीं है कि पीड़ित का नाम प्रकट नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि इसका अर्थ यह भी है कि मीडिया में प्रकाशित किसी भी बात से पीड़ित की पहचान स्पष्ट नहीं होनी चाहिए। कानून निर्माताओं का इरादा यह था कि ऐसे अपराधों की पीड़ित की पहचान न हो ताकि उन्हें भविष्य में किसी भी तरह के भेदभाव या उत्पीड़न का सामना न करना पड़े। बलात्कार की शिकार महिला को समाज में भेदभाव और सामाजिक बहिष्कार का सामना करना पड़ेगा। [पैरा 11, 12][770-डी-एफ]

1.3 धारा 228 ए आईपीसी की उपधारा (2) उन पुलिस अधिकारियों के लिए अपवाद बनाती है, जिन्हें पुलिस स्टेशन में या जांच फाइल में पीड़िता की असली पहचान दर्ज करनी पड़ सकती है। प्रथम सूचना रिपोर्ट ('एफआईआर') में पीड़िता का नाम बताना होगा। हालांकि, इसे सार्वजनिक नहीं किया जाना चाहिए और खास तौर पर मीडिया के सामने नहीं। ऐसे मामलों और अपराधों की जांच करने वाले पुलिस अधिकारियों को भी यथासंभव पीड़िता का वर्णन करने के लिए छद्म नाम का उपयोग करना चाहिए, जब तक कि उसकी पहचान लिखना बिल्कुल जरूरी न हो। महिलाओं के खिलाफ बलात्कार या बच्चों के खिलाफ अपराध से संबंधित एफआईआर की प्रति, जो पोक्सो के दायरे में आती है, पीड़िता के नाम और पहचान को उजागर होने से रोकने के लिए सार्वजनिक डोमेन में नहीं डाली जाएगी। सत्र न्यायाधीश/मजिस्ट्रेट/विशेष न्यायालय लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों और पीड़िता के हितों को ध्यान में रखते हुए एफआईआर की प्रति किसी व्यक्ति (व्यक्तियों) को देने की अनुमति दे सकते हैं। जिन अधिकारियों के समक्ष नाम का खुलासा किया जाता है, उनका भी यह कर्तव्य है कि वे पीड़ित का नाम और पहचान गुप्त रखें और रिपोर्ट के अलावा किसी भी तरीके से इसका खुलासा न करें, जिसे केवल जांच एजेंसी या अदालत को सीलबंद लिफाफे में भेजा जाना चाहिए। इस संबंध में कोई सख्त नियम नहीं हो सकता है, लेकिन पुलिस को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि जिस पत्राचार या ज्ञापन का आदान-प्रदान या जारी किया जाता है, जिसमें पीड़ित का नाम उजागर किया जाता है, उसे सीलबंद लिफाफे में रखा जाए और आम जनता को न बताया जाए। उन्हें मीडिया को नहीं बताया जाना चाहिए और उन्हें सूचना के अधिकार अधिनियम, 2005 के तहत किसी भी व्यक्ति को नहीं दिया जाना चाहिए। पुलिस अधिकारियों को उन सभी दस्तावेजों को सीलबंद लिफाफे में रखना चाहिए, जिनमें पीड़ित का नाम उजागर किया गया है और इन दस्तावेजों को ऐसे समान दस्तावेजों से बदलना चाहिए, जिनमें पीड़ित का नाम सभी रिकॉर्ड से हटा दिया गया हो, जिनकी बड़ी संख्या

में लोगों द्वारा जांच की जा सकती है। सीलबंद लिफाफे को धारा 173 सीआरपीसी के तहत दायर रिपोर्ट के साथ अदालत में दायर किया जा सकता है। जहाँ तक धारा 228 ए आईपीसी की उपधारा (2) के खंड (बी) का सवाल है, अगर किसी वयस्क पीड़िता को अपना नाम प्रकाशित किए जाने या पहचान उजागर किए जाने पर कोई आपत्ति नहीं है, तो वह स्पष्ट रूप से किसी भी व्यक्ति को अपना नाम प्रकट करने के लिए लिखित रूप में अधिकृत कर सकती है। यह पीड़िता का स्वैच्छिक और सचेत कार्य होना चाहिए। [पैरा 13, 14] [771-बी-एच; 772-ए-सी]

1.4 जहां पीड़ित नाबालिग है, वहां धारा 228 ए(2)(सी) अब लागू नहीं होगी क्योंकि पोक्सो अधिनियम के तहत नाबालिगों से संबंधित विशेष प्रावधान हैं। वास्तव में, धारा 228 ए आईपीसी की उपधारा (2) के खंड (सी) से 'या नाबालिग' शब्द को सभी उद्देश्यों और उद्देश्यों के लिए हटा दिया जाना चाहिए। [पैरा 15] [772-डी]

2.1 आज तक न तो केंद्र सरकार और न ही किसी राज्य सरकार ने ऐसी किसी सामाजिक कल्याण संस्था या संगठन को मान्यता दी है, जिसे निकटतम रिश्तेदार अधिकृत कर सकें। अस्वस्थ दिमाग वाला व्यक्ति भी उतना ही देश का नागरिक है जितना कि एक स्वस्थ व्यक्ति। अस्वस्थ दिमाग वाला व्यक्ति जो इस तरह के जघन्य यौन अपराध का शिकार होता है, वह एक ऐसे आघात से गुजरता है जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। जनमत और भावना को जगाने के लिए पीड़ित की पहचान का खुलासा करना बिल्कुल भी आवश्यक नहीं है। यह जघन्य यौन अपराधों के पीड़ितों से संबंधित एक गंभीर मुद्दा है और इसे संवेदनशीलता के साथ निपटाया जाना चाहिए। यदि पीड़िता के अधिकारों की रक्षा और जनमत जुटाने के लिए कोई अभियान शुरू करना है तो ऐसा उसकी पहचान उजागर किए बिना किया जा सकता है। [पैरा 16, 17][772-एफ-जी; 773-बी-सी]

2.2 पीड़िता का नाम या उसकी पहचान उसके निकटतम रिश्तेदार की अनुमति के बिना भी प्रकट नहीं की जानी चाहिए। कुछ मामलों में, निकटतम रिश्तेदार का हित पीड़िता के हित के समान नहीं हो सकता है। ऐसी परिस्थितियों में, आवेदक निकटतम रिश्तेदार नहीं हो सकता है, बल्कि बच्चे का "अगला दोस्त" हो सकता है, जो इस तरह का आवेदन करने का हकदार हो सकता है। यह न्यायालय या सक्षम अधिकारी पर निर्भर करेगा कि वह "अगला दोस्त" कौन है। [पैरा 18, 19][773-ई-जी]

2.3 ऐसे मामले हो सकते हैं, जहां पीड़िता की पहचान, यदि उसका नाम नहीं, तो प्रकट करनी पड़ सकती है। ऐसे मामले भी हो सकते हैं, जहां पीड़िता का शव पाया जाता है। यह स्थापित हो जाता है कि पीड़िता के साथ बलात्कार हुआ था। पीड़िता की पहचान करना संभव

नहीं हो सकता। तब, जाहिर है कि उसकी तस्वीर मीडिया में प्रकाशित करनी होगी। यहां भी, यह निर्देश दिया जाता है कि ऐसा करते समय, इस तथ्य का खुलासा करने की आवश्यकता नहीं है कि ऐसी पीड़िता के साथ यौन अपराध हुआ है। ऐसी अन्य स्थितियां भी हो सकती हैं, जहां पीड़िता की पहचान प्रकट करने में उसके निकटतम रिश्तेदार को न्यायोचित ठहराया जा सकता है। यदि ऐसी कोई आवश्यकता उत्पन्न होती है, तो यह निर्देश दिया जाता है कि पहचान प्रकट करने के लिए अधिकृत करने हेतु आवेदन केवल संबंधित सत्र न्यायाधीश/मजिस्ट्रेट को किया जाना चाहिए और उक्त सत्र न्यायाधीश/मजिस्ट्रेट निर्धारित कानून के आधार पर आवेदन पर निर्णय लेंगे। इस संबंध में संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत शक्ति का प्रयोग किया जाता है क्योंकि सरकार ने किसी सामाजिक या कल्याणकारी संस्था/संगठन की पहचान नहीं की है और निर्धारित कानून को लागू नहीं किया जा सकता है। यदि सरकार वास्तव में धारा 228 ए (2) (सी) आईपीसी के तहत कार्य करना चाहती है, तो उसे ऐसी सामाजिक कल्याण संस्था या संगठन की पहचान करने से पहले इस संबंध में कुछ नियम या स्पष्ट मानदंड निर्धारित करने होंगे। संगठन की प्रकृति क्या होनी चाहिए? आवेदन कैसे किया जाना चाहिए? उस आवेदन पर किस तरह से कार्रवाई की जानी चाहिए? एक स्पष्ट प्रक्रिया निर्धारित की जानी चाहिए। जब तक ऐसा नहीं किया जाता है, तब तक जारी किए गए निर्देश मान्य होंगे। [पैरा 21] [774-बी-ई]

3.1 जहां तक धारा 228 ए आईपीसी की उपधारा (3) का सवाल है, आईपीसी में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि धारा 228 ए के दायरे में आने वाली किसी भी कार्यवाही और धारा 327(2) सीआरपीसी के तहत कोई भी व्यक्ति किसी भी मामले को छाप या प्रकाशित नहीं कर सकता। ये बंद कमरे में होने वाली कार्यवाही है और पीठासीन अधिकारी, अदालत के कर्मचारी, अभियुक्त, उसके वकील, सरकारी वकील, पीड़िता, अगर वह उपस्थित होना चाहती है या गवाह है, के अलावा कोई भी व्यक्ति वहां उपस्थित नहीं हो सकता। यह सुनिश्चित करना उन सभी का कर्तव्य है कि अदालत में जो कुछ भी होता है, उसका खुलासा बाहर न हो। इसका मतलब यह नहीं है कि ऐसे मामलों की रिपोर्टिंग नहीं की जा सकती। प्रेस रिपोर्ट कर सकता है कि मामला अदालत के समक्ष तय किया गया था और कुछ गवाहों से पूछताछ की गई थी। यह रिपोर्ट कर सकता है कि मामला किस उद्देश्य से सूचीबद्ध किया गया था, लेकिन यह रिपोर्ट नहीं कर सकता कि अदालत के अंदर क्या हुआ या पीड़िता या गवाहों का बयान क्या था। सबूतों का खुलासा नहीं किया जा सकता। [पैरा 22][774-एफ-एच; 775-ए]

3.2 पीड़ितों के बहिष्कार को रोकने के सामाजिक उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए, यह उचित होगा कि सभी न्यायालयों अर्थात ट्रायल कोर्ट, उच्च न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों में पीड़ित का नाम इंगित न किया जाए। [पैरा 25][777-ई]

3.3 जहां कोई पीड़िता अपील दायर करती है, वहां यह निर्देश दिया जाता है कि ऐसी पीड़िता अपना नाम 'X' या 'Y' दर्शाकर अपील दायर कर सकती है, साथ ही पीड़िता के नाम का खुलासा न करने के लिए एक आवेदन भी दे सकती है। अपील के साथ दायर किए जाने वाले सीलबंद लिफाफे में वह दस्तावेज संलग्न कर सकती है, जिसमें वह अपीलीय न्यायालय के नियमों के अनुसार अपनी पहचान बता सकती है। न्यायालय विवरण की पुष्टि कर सकता है, लेकिन सार्वजनिक डोमेन में रखी गई सामग्री में पीड़िता का नाम उजागर नहीं किया जाएगा। ऐसे आवेदन पर न्यायालय द्वारा चैंबर में सुनवाई की जानी चाहिए और ऐसे मामले का फैसला होने तक नाम को वाद-सूची में भी नहीं दर्शाया जाना चाहिए। पीड़िता का नाम और पहचान उजागर करने वाले कोई भी दस्तावेज सार्वजनिक डोमेन में नहीं होने चाहिए। [पैरा 27][778-एफ-एच]

4.1 यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम, 2012 (POCSO) का पूरा उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि बच्चे की पहचान तब तक उजागर न की जाए जब तक कि विशेष न्यायालय लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों से इस तरह के प्रकटीकरण की अनुमति न दे। यह प्रकटीकरण केवल तभी किया जा सकता है जब यह बच्चे के हित में हो, अन्यथा नहीं। बच्चे को विरोध का प्रतीक बनाने के लिए बच्चे के नाम का खुलासा आमतौर पर बच्चे के हित में नहीं माना जा सकता है। धारा 23 की उपधारा (1) किसी भी व्यक्ति को पूरी और प्रामाणिक जानकारी के बिना किसी भी रूप में किसी भी बच्चे पर कोई रिपोर्ट दर्ज करने या कोई टिप्पणी करने से रोकती है, चाहे वह लिखित, फोटोग्राफिक या ग्राफिक हो। कोई भी व्यक्ति या मीडिया ऐसी कोई टिप्पणी नहीं कर सकता है जिसका प्रभाव बच्चे की प्रतिष्ठा को कम करने या बच्चे की गोपनीयता का उल्लंघन करने का हो। धारा 23 की उपधारा (2) में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि किसी भी मीडिया में कोई भी रिपोर्ट बच्चे की पहचान का खुलासा नहीं करेगी, जिसमें नाम, पता, फोटो, पारिवारिक विवरण, स्कूल, पड़ोस या कोई अन्य विवरण शामिल है, जिससे बच्चे की पहचान उजागर हो सकती है। इससे स्पष्ट रूप से पता चलता है कि विधानमंडल की मंशा यह थी कि बच्चे की पहचान प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उजागर नहीं होनी चाहिए। 'कोई अन्य विवरण' वाक्यांश को व्यापक आयाम दिया जाना चाहिए और इसे केवल एक ही श्रेणी का पढ़ा नहीं जा सकता है। विधानमंडल की मंशा यह है कि बच्चे की गोपनीयता और प्रतिष्ठा को नुकसान न पहुंचे। इसलिए, कोई भी जानकारी जो

बच्चे की पहचान के खुलासे की ओर ले जा सकती है, मीडिया द्वारा उजागर नहीं की जा सकती है। मीडिया को न केवल सतर्क रहना होगा, बल्कि मीडिया पर यह सुनिश्चित करने का कर्तव्य भी डाला गया है कि वह ऐसा कुछ न करे और ऐसी कोई जानकारी न दे, जिससे सीधे या अप्रत्यक्ष रूप से बच्चे की पहचान उजागर हो। [पैरा 30, 31][780-ई-जी; 781-जी-एच; 782-ए-सी]

4.2 इसमें कोई संदेह नहीं है कि मीडिया का यह कर्तव्य है कि वह हर अपराध की रिपोर्टिंग करे। मीडिया बलात्कार और बच्चों के खिलाफ यौन अपराधों के मामले में पीड़ित का नाम और पहचान उजागर किए बिना ऐसा कर सकता है। मीडिया को ऐसे सभी मामलों की रिपोर्टिंग करने का न केवल अधिकार है, बल्कि यह उसका दायित्व भी है। हालांकि, मीडिया को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वह इसे सनसनीखेज न बनाए। मीडिया न केवल बच्चे की पहचान उजागर करने के लिए बाध्य है, बल्कि कानून के तहत उसे ऐसी कोई भी सामग्री उजागर न करने का आदेश दिया गया है, जिससे बच्चे की पहचान उजागर हो सकती है। इसका कोई भी उल्लंघन धारा 23(4) के तहत अपराध होगा। [पैरा 32, 33][782-डी, जी-एच]

4.3 पीड़ितों के लिए समर्थन जुटाने के लिए पहचान उजागर करने के संबंध में ऊपर दिए गए तर्क मृत पीड़ितों पर भी लागू होंगे। मृतकों की भी अपनी गरिमा होती है। उन्हें केवल इसलिए गरिमा से वंचित नहीं किया जा सकता कि वे मर चुके हैं। [पैरा 34][783-बी-सी]

4.4 बिजॉय बनाम पश्चिम बंगाल राज्य के मामले में कलकत्ता उच्च न्यायालय ने पोक्सो के प्रावधानों से निपटने के लिए कारणों को बताते हुए विस्तृत निर्णय दिया है और माना है कि न तो जांच के दौरान और न ही सुनवाई के दौरान पीड़ित का नाम उजागर किया जाना चाहिए। कलकत्ता उच्च न्यायालय ने यह सुनिश्चित करने के लिए अन्य निर्देश भी दिए हैं कि कानून के प्रावधानों का अक्षरशः पालन किया जाए और पीड़ित बच्चे के मौलिक अधिकारों और अन्य बुनियादी मानवाधिकारों की रक्षा की जाए। इन सभी निर्देशों से सहमति है। देश के सभी उच्च न्यायालयों की किशोर न्याय समिति के सभी अध्यक्षों और सदस्यों से अनुरोध है कि वे कलकत्ता उच्च न्यायालय के निर्णय और उसमें जारी निर्देशों को ध्यान से पढ़ें और वे प्रत्येक उच्च न्यायालय/राज्य की विशेष जरूरतों को ध्यान में रखते हुए समान निर्देश जारी कर सकते हैं। [पैरा 38][784-डी-जी]

4.5 पोक्सो में बाल-अनुकूल न्यायालयों की स्थापना का प्रावधान है। न्यायालय में प्रवेश करने वाला कोई भी वादी न्यायालय के माहौल से भयभीत महसूस करता है। बच्चे

और महिलाएँ, विशेषकर वे जो यौन उत्पीड़न के शिकार हुए हैं, न्यायालयों के माहौल से लगभग अभिभूत हो जाते हैं। इसलिए, यह अनिवार्य है कि ऐसी अदालतें हों जो बाल-अनुकूल हों। धारा 33(4) पोक्सो विशेष न्यायालय को यह सुनिश्चित करने का निर्देश देता है कि न्यायालय में बाल-अनुकूल वातावरण हो। धारा 36 में यह प्रावधान है कि गवाही के समय बच्चे को अभियुक्त को नहीं देखना चाहिए। यह सुनिश्चित करने के लिए है कि अपराध के कथित अपराधी को देखकर बच्चा भयभीत न हो। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, परीक्षण बंद कमरे में किए जाने हैं। इन न्यायालयों का उपयोग न केवल पोक्सो के तहत मामलों की सुनवाई के लिए किया जाना चाहिए, बल्कि महिलाओं के खिलाफ बलात्कार के मामलों की सुनवाई के लिए भी इनका उपयोग किया जा सकता है। वास्तव में, यह बच्चों और महिलाओं के हित में होगा, और न्याय के हित में होगा यदि देश के सभी जिलों में वन स्टॉप सेंटर भी यथाशीघ्र स्थापित किए जाएं। इन वन स्टॉप सेंटरों का उपयोग एक केंद्रीय पुलिस स्टेशन के रूप में किया जा सकता है, जहाँ शहर/कस्बे में महिलाओं और बच्चों के खिलाफ सभी अपराध दर्ज किए जाते हैं। उनके पास अच्छी तरह से प्रशिक्षित कर्मचारी होने चाहिए जो यौन शोषण से पीड़ित बच्चों और महिलाओं की जरूरतों के प्रति संवेदनशील हों। हैदराबाद में पहले से ही स्थापित एक ऐसा केंद्र "भरोसा" है। इसे देश के अन्य वन स्टॉप सेंटरों के लिए एक मॉडल के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। [पैरा 39-42][785-ए-एफ; 786-बी]

4.7 निम्नलिखित निर्देश जारी किए गए हैं:-

1. कोई भी व्यक्ति पीड़िता का नाम प्रिंट, इलेक्ट्रॉनिक, सोशल मीडिया आदि में प्रकाशित नहीं कर सकता है या किसी भी ऐसे तथ्य का खुलासा नहीं कर सकता है जिससे पीड़िता की पहचान हो सके और जिससे उसकी पहचान आम जनता को पता चल सके।

2. ऐसे मामलों में जहां पीड़िता मर चुकी है या मानसिक रूप से अस्वस्थ है, पीड़िता का नाम या उसकी पहचान का खुलासा नहीं किया जाना चाहिए, यहां तक कि उसके निकटतम रिश्तेदार की अनुमति के बिना भी, जब तक कि उसकी पहचान के खुलासे को उचित ठहराने वाली परिस्थितियां मौजूद न हों, जिसका निर्णय सक्षम प्राधिकारी द्वारा किया जाएगा, जो वर्तमान में सत्र न्यायाधीश है।

3. आईपीसी की धारा 376, 376 ए, 376 एबी, 376 बी, 376 सी, 376 डी, 376 डीए, 376 डीबी या 376 ई के तहत अपराधों से संबंधित एफआईआर और पोक्सो के तहत अपराधों को सार्वजनिक डोमेन में नहीं रखा जाएगा।

4. यदि कोई पीड़ित धारा 372 सीआरपीसी के तहत अपील दायर करता है, तो पीड़ित के लिए अपनी पहचान का खुलासा करना आवश्यक नहीं है और अपील को कानून द्वारा निर्धारित तरीके से निपटाया जाएगा।

5. पुलिस अधिकारियों को चाहिए कि वे सभी दस्तावेज जिनमें पीड़िता का नाम प्रकट किया गया है, यथासंभव सीलबंद लिफाफे में रखें तथा इन दस्तावेजों को ऐसे समान दस्तावेजों से बदलें जिनमें पीड़िता का नाम उन सभी अभिलेखों से हटा दिया गया हो जिनकी सार्वजनिक डोमेन में जांच की जा सकती है।

6. वे सभी अधिकारी जिनके समक्ष जांच एजेंसी या न्यायालय द्वारा पीड़िता का नाम प्रकट किया गया है, वे भी पीड़िता का नाम और पहचान गुप्त रखने तथा रिपोर्ट को छोड़कर किसी भी तरीके से इसका खुलासा न करने के लिए बाध्य हैं, जिसे केवल जांच एजेंसी या न्यायालय को सीलबंद लिफाफे में भेजा जाना चाहिए।

7. धारा 228ए(2)(सी) के तहत मृत पीड़ित या मानसिक रूप से विक्षिप्त पीड़ित की पहचान उजागर करने के लिए निकटतम रिश्तेदार द्वारा आवेदन केवल संबंधित सत्र न्यायाधीश के समक्ष किया जाना चाहिए, जब तक कि सरकार धारा 228ए(2)(सी) के तहत कार्रवाई नहीं करती और इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देशों के अनुसार ऐसे सामाजिक कल्याण संस्थानों या संगठनों की पहचान करने के लिए मानदंड निर्धारित नहीं करती।

8. पोक्सो के तहत नाबालिग पीड़ितों के मामले में, उनकी पहचान का खुलासा केवल विशेष न्यायालय द्वारा ही किया जा सकता है, यदि ऐसा खुलासा बच्चे के हित में हो।

9. सभी राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों से अनुरोध है कि वे आज से एक वर्ष के भीतर प्रत्येक जिले में कम से कम एक 'वन स्टॉप सेंटर' स्थापित करें। [पैरा 43][786-सी-एच; 787-ए-डी]

बिजॉय बनाम पश्चिम बंगाल राज्य **2017 सी आर आई एल जे 3893 - अनुमोदित।**

पंजाब राज्य बनाम गुरमीत सिंह ***(1996) 2 एससीसी 384: [1996] 1 एससीआर 532;*** *भूपिंदर शर्मा बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य* **(2003) 8 एससीसी 551: [2003] 4 अनुपूरक एससीआर 792 - पर भरोसा किया गया।**

निवेदिता झा बनाम बिहार राज्य **एसएलपी (सी) संख्या 24978/2018;** *अजू वर्गीस बनाम केरल राज्य* ***केरल उच्च न्यायालय द्वारा 27.09.2018 को सी आर एस एम संख्या 5247/2017 में निर्णय दिया गया;*** *सुभाष चंद्र राय बनाम सिक्किम राज्य 2018* **सी आर आई एल जे *3146 – संदर्भित।***

केस कानून संदर्भ

[1996] 1 एससीआर 532	*निर्भर*	*पैरा 5*
[2003] 4 अनुपूरक एससीआर 792	*निर्भर*	*पैरा 25*
2018 **सीआरआईएलजे** *3146*	*संदर्भित*	*पैरा 37*
2017 **सीआरआईएलजे** *3893*	*मंजूरी*	*पैरा 38*

सिविल/आपराधिक मूल अधिकार क्षेत्र: रिट याचिका (सिविल) संख्या 565/2012.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के अंतर्गत

के साथ

रिट याचिका (आपराधिक) संख्या 1/2013

रिट याचिका (सिविल) संख्या 22 और 148/2013

रिट याचिका (सिविल) संख्या 568/2012

एसएलपी (सीआरएल.)….सीआरएलएमपी संख्या 16041/2014.

ए.एन.एस. नाडकर्णी, एएसजी, विकास महाजन, एएजी, आलोक अग्रवाल, सदस्य सचिव (एनएएलएसए), सुश्री इंदिरा जयसिंह, वरिष्ठ अधिवक्ता (एसी), ए.के. पांडा, वरिष्ठ वकील, सुश्री अजिता शर्मा, सुश्री आंचल सिंह, पी.एस. त्रिपाठी, रवि चन्द्र प्रकाश, मुकेश कुमार सिंह, सुश्री भानु प्रिया शर्मा, मोहित कौशिक, सुश्री वाणी व्यास, अमित, डॉ. गजेंद्र प्रसाद सिंह, प्रशांत चौधरी, आर.पी. गुप्ता, ई.सी. अग्रवाला, अर्धेन्दुमौली कुमार प्रसाद, सुश्री तरूणा अर्धेन्दुमौली प्रसाद, नमित सक्सेना, अमृतेश राज, पीयूष सिंह, नितेश रंजन, वैभव श्रीवास्तव, शशांक सक्सैना, सुश्री भक्ति पसरीजा सेठी, एम.पी. गुप्ता, सुश्री सौदामिनी शर्मा, बी.वी. बलराम दास, शैलेन्द्र सैनी, सुश्री सुनीता शर्मा, राज बहादुर यादव, श्रीमती अनिल कटियार, जी.एस. मक्कड़, एस. वसीम ए कादरी, जुबैर अहमद खान, तमीम कादरी, ज़ैद अली सब्ज़पोश, सईद कादरी, सुश्री अनिता शेनॉय, सुश्री दीक्षा राय, पलक महाजन, गुंटूर प्रभाकर, सुश्री प्रेरणा सिंह, अनिल श्रीवास्तव, ऋतुराज विश्वास, सत्येन्द्र कुमार श्रीवास्तव, सुश्री आभा आर. शर्मा, डी.एस. परमार, सुश्री सुजीता श्रीवास्तव, महेंद्र सिंह, ए.पी. मायी, चिराग जैन, सुश्री रुचिरा गुप्ता, संतोष रेबेलो, अनुराग शर्मा, शिशिर देशपांडे, सुश्री हेमन्तिका वाही, सुश्री पूजा सिंह, संजय कुमार विसेन, विनोद शर्मा, तपेश कुमार सिंह, आदित्य प्रताप सिंह, एम. शोएब आलम, उज्जवल सिंह, मोजाहिद करीम खान, वी.एन. रघुपति, लग्नेश मिश्रा, परीक्षित पी. अंगड़ी, सी.के. ससी, नयनतारा रॉय, सनी चौधरी, अभिलाष अत्री, सुश्री दीपा एम। कुलकर्णी, निशांत रमाकांतराव कटनेश्वरकर, लीशांगथेम रोशमणि, सुश्री मैबम बबिना, सुश्री

अनुपमा नगंगोम, रंजन मुखर्जी, के.वी. खरलिंगदोह, डेनियल स्टोन लिंगदोह, टी.जी. नारायणन नायर, सुश्री के. एनाटोली सेमा, अमित कुमार सिंह, सूर्य प्रसाद मिश्रा, शिभाशीष मिश्रा, चंदन कुमार मंडल, आशीष कुमार सिन्हा, करण भरिहोके, कौशल नारायण मिश्रा, सुश्री नवकिरण बोलाय, नलिन कोहली, अंकित रॉय, मिलिंद कुमार, सुश्री अरुणा माथुर, अवनीश अर्पुथम, सुश्री। अनुराधा अर्पुथम, सुश्री गीतांजलि (मैसर्स अर्पुथम अरुणा एंड कंपनी के लिए), एम. योगेश कन्ना, सुश्री सुजाता बागधी, एस. पार्थ सारथी, एस.राजा राजेश्वरन, एस. उदय कुमार सागर, मृत्युंजय सिंह, शुवोदीप रॉय, ऋतुराज विश्वास, सुश्री गरिमा प्रसाद, सुश्री पूनम आनंद, सुश्री रचना श्रीवास्तव, सुश्री मोनिका, अविरल सक्सेना, सुहान मुखर्जी, सुश्री आस्था शर्मा, अमित वर्मा, अभिषेक मनचंदा, सुश्री काजल दलाल, सुश्री डिम्पल नागपाल (पीएलआर चैंबर्स एंड कंपनी के लिए), के.वी.जगदीश्वरन, श्रीमती जी. इंदिरा, मृणाल के. मंडल, सुश्री कामाक्षी एस. मेहलवाल, सांवेर मेहलवाल, राजू सोनकर, चिराग एम. श्रॉफ, वी.जी. प्रगासम, प्रभु रामसुब्रमण्यम, एस. मनुराज, सुश्री अदिति गुप्ता, सत्य मित्रा, टी.एन. राम अ रॉय, हितेश कुमार शर्मा, टी. वीरा रेड्डी, सलाहकार। दिखने के लिए पार्टियां

निपुण सक्सेना, याचिकाकर्ता-व्यक्तिगत।

न्यायालय का निर्णय सुनाया गया

दीपक गुप्ता, न्यायमूर्ति

1. बलात्कार के वयस्क पीड़ितों और यौन शोषण के शिकार बच्चों की पहचान कैसे और किस तरह से संरक्षित की जानी चाहिए ताकि उन्हें अनावश्यक उपहास,सामाजिक बहिष्कार और उत्पीड़न का सामना ना करना पड़े,यह इन मामलों में उठने वाले मुद्दों में से एक है।

2. हम इस निर्णय को दो भागों में विभाजित कर रहे हैं। पहला भाग भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में 'आई.पी.सी.') के अंतर्गत बलात्कार के अपराध के पीड़ितों से संबंधित है और दूसरा भाग उन पीड़ितों से संबंधित है जो बाल यौन अपराध संरक्षण अधिनियम, 2012 (संक्षेप में 'पॉक्सो') के अंतर्गत अपराधों के अधीन हैं।

3. इस निर्णय में "संचार माध्यम" के किसी भी संदर्भ में मुद्रणालय, इलेक्ट्रॉनिक और सामाजिक संचार-माध्यम आदि सहित सभी प्रकार के संचार माध्यम शामिल होंगे।

<u>प्रथम भाग</u>

4. दुर्भाग्य से, हमारे समाज में, यौन अपराध के पीड़ित, विशेष रूप से बलात्कार के पीड़ित, के साथ अपराध के अपराधकर्ता से भी बुरा व्यवहार किया जाता है। पीड़िता निर्दोष

है। उसे बलपूर्वक यौन शोषण का शिकार बनाया गया है। हालाँकि, पीड़िता की कोई गलती नहीं होने के कारण, समाज पीड़िता के साथ सहानुभूति रखने के बजाय, उसे 'अछूत' के रूप में मानना शुरू कर देता है। बलात्कार की पीड़िता के साथ "अछूत" जैसा व्यवहार किया जाता है और उसे समाज से बहिष्कृत किया जाता है। कई बार, उसका परिवार भी उसे अपने समूह में वापस स्वीकार करने से इनकार कर देता है। कठोर वास्तविकता यह है कि कई बार बलात्कार के मामले तथाकथित "सम्मान"की झूठी धारणाओं के कारण जिसे पीडिता का परिवार भी बनाए रखना चाहता है, प्रतिवेदित नहीं किये जाते। बात यहीं समाप्त नहीं होती। मामला दर्ज होने और एफ.आई.आर. अभिलिखित होने के बाद भी, पुलिस अक्सर पीड़िता से अभियुक्त की तरह प्रश्न करती है। यदि पीड़िता एक युवा लड़की है जो एक लड़के के साथ मिल-जुल रही है और घूम रही है, तो उससे अभित्रस्त करने वाले शब्दों में पूछा जाता है कि वह एक लड़के के साथ क्यों मिल-जुल रही थी। न्याय के साथ पीड़िता का पहला सामना अप्रिय होता है जहाँ उसे यह महसूस कराया जाता है कि गलती उसकी है; वह हीं अपराध का कारण है।

5. यदि पीड़िता पुलिस द्वारा उसके खिलाफ लगाए गए आरोपों और आक्षेपों से निपटने के लिए पर्याप्त मजबूत है, तो उसे आम तौर पर न्यायालय में भी ज्यादा सहायता नहीं मिलती है। न्यायालय में पीड़िता से कठोर प्रति-परीक्षण किया जाता है जिसमें पीड़िता के नैतिक मूल्यों और चरित्र के बारे में बहुत सारे प्रश्न उठाए जाते हैं। पीठासीन न्यायाधीश कभी-कभी मूक दर्शकों की तरह बैठते हैं और आम तौर पर बचाव पक्ष को इस तरह के अपमानजनक और अनावश्यक प्रश्न पूछने से नहीं रोकते हैं। हम यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि किसी भी तरह से हम अभियोक्ता से जिरह करने के बचाव पक्ष के अधिकार में कटौती नहीं करना चाहते हैं, लेकिन यह एक निश्चित स्तर की शालीनता और बड़े पैमाने पर महिलाओं के प्रति सम्मान के साथ किया जाना चाहिए। समय के साथ, न्यायालयों को संवेदनशील बनाने के लिए कई प्रयास किये गए हैं,लेकिन अनुभव से पता चला है कि सबसे शुरुआती चेतावनियों के बावजूद, पहली बार 1996[1] में, न्यायालय आज भी पीड़िता की पहचान उजागर करती हैं।

6. आई.पी.सी. में धारा 228ए को 1983 के संशोधन अधिनियम संख्या 43 के माध्यम से 25.12.1983 से लागू किया गया था और यह निम्नानुसार हैः

" 228ए. कतिपय अपराधों आदि के पीड़ित की पहचान का प्रकटीकरण-

1 पंजाब राज्य बनाम गुरमीत सिंह, (1996) 2 एससीसी 384

(1) जो कोई ऐसा नाम या किसी ऐसे मामले को मुद्रित या प्रकाशित करता है जिससे किसी ऐसे व्यक्ति की पहचान को ज्ञात कर सके जिसके खिलाफ धारा 376, धारा 376 ए, धारा 376 एबी, धारा 376 बी, धारा 376 सी, धारा 376 डी, धारा 376 डीए, धारा 376 डीबी या धारा 376 ई के तहत अपराध अभिकथित है या किया जाना पाया गया है (इसके बाद इस धारा में पीड़िता के रूप में संदर्भित) उसे किसी एक अवधि के लिए कारावास से दंडित किया जाएगा जो दो वर्ष तक की अवधि के लिए बढ़ाया जा सकेगा और जुर्माने के लिए भी दायी होगा।

(2) उप-धारा (1) की कोई बात नाम के किसी भी मुद्रण या प्रकाशन या किसी ऐसे मामले पर लागू नहीं होती है जो पीड़िता की पहचान को ज्ञात कर सके यदि ऐसा मुद्रण या प्रकाशन -

(क) पुलिस थाने के प्रभारी अधिकारी या पुलिस अधिकारी द्वारा या उसके लिखित आदेश के तहत ऐसे अन्वेषण के उद्देश्यों के लिए सद्भावनापूर्वक कार्य करते हुए ऐसे अपराध का अन्वेषण कर रहा हो; या

(ख) पीड़ित द्वारा या उसके लिखित प्राधिकरण द्वारा; या

(ग) जहाँ पीड़ित मृत या नाबालिग है या

अस्वस्थ मन वाला हो, वहाँ पीड़ित के निकट संबंधी द्वारा या

लिखित रूप में प्राधिकरण के साथ:

बशर्ते कि ऐसा कोई प्राधिकरण किसी भी मान्यता प्राप्त कल्याणकारी संस्थान या संगठन के अध्यक्ष या सचिव के अलावा किसी अन्य व्यक्ति को, चाहे वह किसी भी नाम से जाना जाए, निकट संबंधियों द्वारा नहीं दिया जाएगा।

स्पष्टीकरण - इस उप-धारा के प्रयोजनों के लिए, "मान्यता प्राप्त कल्याणकारी संस्था या संगठन" का अर्थ है केंद्र या राज्य सरकार द्वारा इस संबंध में मान्यता प्राप्त सामाजिक कल्याण संस्था या संगठन।

(3) जो कोई ऐसे न्यायालय की पूर्व अनुमति के बिना, उप-धारा (1) में निर्दिष्ट अपराध के संबंध में न्यायालय के समक्ष किसी कार्यवाही के संबंध में किसी मामले को मुद्रित या प्रकाशित करता है, वह दोनों में से किसी भी विवरण के कारावास से दंडित किया जाएगा जो दो वर्ष तक बढ़ सकती है और जुर्माने के लिए भी दायी होगा।

स्पष्टीकरण- किसी भी उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का मुद्रण या प्रकाशन इस धारा के अर्थ में अपराध नहीं है। .

7. हम दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में 'सी.आर.पी.सी.') की धारा 327 का भी उल्लेख कर सकते हैं, जिसमें यह प्रावधान है कि न्यायालय खुले होने चाहिए और आम तौर पर जनता को न्यायालयों तक पहुंच होनी चाहिए। धारा 327 की उप-धारा (2) को 1983 के उसी संशोधन अधिनियम द्वारा जोड़ा गया था। धारा 327, जैसा कि संशोधित किया गया है, इस प्रकार हैः

"धारा 327. न्यायालय खुला रहेगा।

(1) जिस स्थान पर कोई आपराधिक न्यायालय किसी अपराध की जांच या विचारण चलाने के उद्देश्य से आयोजित किया जाता है, उसे एक खुला न्यायालय माना जाएगा जिसमें आम तौर पर जनता की पहुंच हो सकती है,जहाँ तक उन्हें आसानी से शामिल कर सकते हैंः

बशर्ते कि पीठासीन न्यायाधीश या दंडाधिकारी, यदि वह उचित समझते हैं, तो किसी विशेष मामले में किसी भी जांच या विचारण के किसी भी चरण में आदेश दे सकते हैं कि आम तौर पर जनता या किसी विशेष व्यक्ति को न्यायालय द्वारा उपयोग किए जाने वाले कक्ष या भवन में प्रवेश करने या रहने या रहने का अधिकार नहीं होगा।

(2) उप-धारा (1) में किसी बात के होते हुए भी, भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 376, धारा 376 ए, धारा 376 एबी, धारा 376 बी, धारा 376 सी, धारा 376 डी, धारा 376 डीबी या धारा 376 ई के तहत बलात्कार या अपराध की जांच और विचारण बंद कमरे में किया जाएगाः

बशर्ते कि पीठासीन न्यायाधीश, यदि वह उचित समझते हैं, या किसी भी पक्ष द्वारा किए गए आवेदन पर, किसी विशेष व्यक्ति को न्यायालय द्वारा उपयोग किए जाने वाले कक्ष या भवन में प्रवेश करने या रहने या रहने की अनुमति दे सकते हैंः

बशर्ते कि बंद कक्ष में विचारण एक महिला न्यायाधीश या दंडाधिकारी द्वारा यथासंभव व्यावहारिक रूप से संचालित किया जाएगा।

(3) जहां उप-धारा (2) के तहत कोई कार्यवाही की जाती है, वहां किसी भी व्यक्ति के लिए न्यायालय की पूर्व अनुमति के अलावा ऐसी किसी भी कार्यवाही

के संबंध में किसी भी मामले को मुद्रित या प्रकाशित करना विधिसम्मत नहीं होगाः

बशर्ते कि बलात्कार के अपराध के संबंध में विचारण की कार्यवाही के मुद्रण या प्रकाशन पर प्रतिबंध हटाया जा सकता है, बशर्ते कि पक्षकारों के नाम और पते की गोपनीयता बनाए रखी जाए। .

8. 1983 के संशोधन अधिनियम के तहत बलात्कार, सामूहिक बलात्कार आदि के मामलों को खुले न्यायालय में सुनवाई किए जाने वाले मामलों की श्रेणी से बाहर रखा गया था। बाद में 2013 के संशोधन अधिनियम के माध्यम से इसी तरह के अन्य समान अपराधों को शामिल किया गया।

9. धारा 228ए की उप-धारा (1) में प्रावधान है कि कोई भी व्यक्ति जो किसी ऐसे व्यक्ति का नाम और पहचान बताता है जो धारा 376,376ए, 376एबी, 376बी, 376सी, 376डी, 376डीए, 376डीबी या 376ई के तहत आने वाले अपराध की अभि कथित पीड़िता है, वह दंडनीय अपराध करता है और दो साल तक की अवधि के लिए दंडनीय होगा।

10. हालांकि, धारा 228ए आईपीसी की उपधारा (2) के तहत पीड़ित की पहचान को उसमें वर्णित कुछ परिस्थितियों में छापने या प्रकाशित करने की अनुमति है। कोई भी व्यक्ति, जो न्यायालय के समक्ष ऐसे अपराध के संबंध में कार्यवाही से संबंधित कोई भी मामला न्यायालय की अनुमति के बिना प्रकाशित करता है, वह अपराध करता है। हालांकि स्पष्टीकरण में यह प्रावधान है कि उच्च न्यायालयों या सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों को छापना या प्रकाशित करना आईपीसी की धारा के अंतर्गत कोई अपराध नहीं माना जाएगा।

11. ना तो आई.पी.सी और ना हीं सी.आर.पी.सी. ने 'किसी भी व्यक्ति की पहचान' वाक्यांश को परिभाषित किया है। आई.पी.सी. की धारा 228ए स्पष्ट रूप से"नाम या किसी भी बात के मुद्रण या प्रकाशन करने से प्रतिबंधित करती है जिससे व्यक्ति की पहचान ज्ञात हो सकती है"। यह स्पष्ट है कि न केवल पीड़िता के नाम का प्रकाशन निषिद्ध है, बल्कि किसी अन्य मामले का खुलासा भी निषिद्ध है जिससे ऐसे पीड़िता की पहचान ज्ञात हो सकती है। हमारा स्पष्ट रूप से यह विचार है कि "मामला जो व्यक्ति की पहचान को ज्ञात कर सकता है" वाक्यांश का केवल यह अर्थ नहीं है कि केवल पीड़िता का नाम प्रकट नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि इसका यह भी अर्थ है कि पीड़िता की पहचान मीडिया में प्रकाशित किसी भी मामले से स्पष्ट नहीं होनी चाहिए। विधि निर्माताओं की मंशा थी कि इस तरह के अपराधों के पीड़ितों की पहचान नहीं की जानी चाहिए ताकि उन्हें भविष्य में किसी भी शत्रुतापूर्ण भेदभाव या उत्पीड़न का सामना न करना पड़े।

12. बलात्कार की पीड़िता को समाज में शत्रुतापूर्ण भेदभाव और सामाजिक बहिष्कार का सामना करना पड़ेगा। ऐसी पीड़िता को नौकरी पाने में कठिनाई होगी, विवाह करने में कठिनाई होगी और एक सामान्य मनुष्य की तरह समाज में एकीकृत होने में भी कठिनाई होगी। हमारा आपराधिक न्यायशास्त्र पर्याप्त गवाह संरक्षण कार्यक्रम प्रदान नहीं करता है और इसलिए, पीड़िता की रक्षा करने और उसकी पहचान छिपाने की आवश्यकता बहुत अधिक है। इस संबंध में, हम कुछ तरीकों और साधनों का संदर्भ दें सकते हैं जहाँ पीड़िता का नाम लिए बिना उसकी पहचान को प्रकट किया जाता है। हाल हीं में सुर्खियों में आए एक मामले में, हालांकि पीड़िता का नाम नहीं दिया गया था, यह कहा गया था कि उसने राज्य बोर्ड परीक्षा में शीर्ष स्थान प्राप्त किया था और राज्य का नाम दिया गया था। उसकी पहचान का पता लगाने और स्थापित करने के लिए प्रक्षेपास्त्र विज्ञान की आवश्यकता नहीं होगी। एक अन्य उदाहरण में, इलेक्ट्रॉनिक संचार-माध्यम पर दृश्य दिखाया गया है जिसमें पीड़िता का चेहरा धुंधला है लेकिन उसके रिश्तेदारों, उसके पड़ोसियों, गाँव का नाम आदि के चेहरे स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहे हैं। यह भी पीड़िता की पहचान का खुलासा करने के बराबर है। इसलिए हमारा मानना है कि कोई भी व्यक्ति पीड़िता का नाम मुद्रित या प्रकाशित नहीं कर सकता है या किसी भी ऐसे तथ्य का खुलासा नहीं कर सकता है जिससे पीड़िता की पहचान हो सके और जिससे उसकी पहचान बड़े पैमाने पर जनता को पता चले।

13. आई.पी.सी. की धारा 228ए की उप-धारा (2) उन पुलिस अधिकारियों के लिए एक अपवाद का निर्माण करती है जिन्हें पुलिस थाना या अन्वेषण संचिका में पीड़िता की सही पहचान अभिलिखित करनी पड़ सकती है। हम इस तथ्य से अनभिज्ञ नहीं हैं कि प्रथम सूचना प्रतिवेदन (संक्षेप में 'एफ.आई.आर.') में पीड़िता के नाम का खुलासा करना होगा। हालाँकि, इसे सार्वजनिक नहीं किया जाना चाहिए और विशेष रूप से मीडिया को नहीं। हमारा मानना है कि ऐसे मामलों और अपराधों का अन्वेषण कर रहे पुलिस अधिकारी द्वारा भी यथासंभव पीड़िता का वर्णन करने के लिए छद्म नाम का उपयोग किया जाना चाहिए, जब तक कि उसकी पहचान लिखना बिल्कुल आवश्यक ना हो। हम यह स्पष्ट करते हैं कि किसी महिला के खिलाफ बलात्कार के अपराध या पॉक्सो के दायरे में आने वाले बच्चों के खिलाफ अपराधों से संबंधित प्राथमिकी की प्रति को सार्वजनिक अधिकार क्षेत्र में नहीं रखी जाएगी ताकि पीड़िता का नाम और पहचान का प्रकटीकरण ना किया जा सके। सत्र न्यायाधीश/दंडाधिकारी /विशेष न्यायालय कारणों को लिखित रूप में दर्ज कर सकता है और पीड़िता के हित को ध्यान में रखते हुए प्राथमिकी की प्रति किसी व्यक्ति (व्यक्तियों) को देने की अनुमति दे सकता है। उन मामलों के कुछ उदाहरण जहाँ उसकी पहचान को प्रकट

करना होगा, वे हैं जब उसके शरीर से नमूने लिए जाते हैं, जब चिकित्सीय परीक्षण किया जाता है, जब डीएनए पार्श्व चित्रण की जाती है, जब पीड़िता की जन्म तिथि को विद्यालय से अभिलेख प्राप्त करके स्थापित किया जाना होता है,आदि। हालाँकि, इन मामलों में भी पुलिस अधिकारियों को सावधानीपूर्वक आगे बढ़ना चाहिए और पीड़िता की पहचान का जितना संभव हो उतना कम प्रकट करना चाहिए, लेकिन पीड़िता को मांगी गई जानकारी से जोड़ने के लिए पर्याप्त होना चाहिए। हम यह स्पष्ट करते हैं कि जिन अधिकारियों को ऐसे नमूने भेजे जाने पर नाम प्रकटित किया जाता है, वे भी पीड़िता का नाम और पहचान गुप्त रखने के लिए कर्तव्यबद्ध हैं और प्रतिवेदन के अलावा किसी भी तरह से इसको प्रकट ना करें, जिसे केवल सीलबंद लिफाफे में अन्वेषण निकायों या न्यायालय को भेजा जाना चाहिए। इस संबंध में कोई कठोर और त्वरित नियम नहीं हो सकता है, लेकिन पुलिस को निश्चित रूप से यह सुनिश्चित करना चाहिए कि जिस पत्राचार या ज्ञापन का आदान-प्रदान या निर्गत किया गया है, जिसमें पीड़िता के नाम को प्रकटित किया गया है, उसे सीलबंद लिफाफे में रखा जाए और बड़े पैमाने पर जनता के सामने प्रकट नहीं किया जाए। उन्हें मीडिया के सामने प्रकट नहीं किया जाना चाहिए और उन्हें सूचना का अधिकार अधिनियम, 2015 के तहत किसी भी व्यक्ति को प्रस्तुत नहीं किया जाना चाहिए। हम निर्देश देते हैं कि पुलिस अधिकारियों को उन सभी दस्तावेजों को सीलबंद लिफाफे में रखना चाहिए जिनमें पीड़िता का नाम प्रकट किया गया है और इन दस्तावेजों को समान दस्तावेजों से बदलना चाहिए जिसमें पीड़िता का नाम सभी अभिलेखों से हटा दिया गया है जिसकी बड़ी संख्या में लोगों द्वारा गहन परीक्षण की जा सकती है। सीलबंद लिफाफा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के तहत दर्ज प्रतिवेदन के साथ न्यायालय में दायर किया जा सकता है।

14. जहां तक आई.पी.सी. की धारा 228ए की उप-धारा (2) के खंड (बी) का संबंध है, यदि किसी वयस्क पीड़िता को अपना नाम प्रकाशित होने या पहचान प्रकट होने पर कोई आपत्ति नहीं है, तो वह स्पष्ट रूप से किसी भी व्यक्ति को अपना नाम प्रकट करने के लिए लिखित रूप में अधिकृत कर सकती है। यह पीड़िता का स्वैच्छिक और सचेत कार्य होना चाहिए। कुछ पीड़िता ऐसे होती हैं जो अपने नाम उजागर होने के बाद भी समाज का सामना करने के लिए काफी मजबूत और तैयार होती हैं। उनमें से कुछ, वास्तव में, बलात्कार की अन्य पीड़ितों की मदद करती हैं और वे अन्य बलात्कार पीड़ितों के लिए प्रेरणा का स्रोत बन जाती हैं। जब तक पीड़िता व्यस्क है, तब तक किसी को भी पीड़िता के अपने नाम का खुलासा करने पर कोई आपत्ति नहीं हो सकती है।

15. आई.पी.सी. की धारा 228ए की उप-धारा (2) के खंड (सी) पर आते हुए, हमारी राय है कि जहां पीड़िता नाबालिग है, वहां धारा 228ए अब पॉक्सो के अधिनियमन के कारण लागू नहीं होगी जो विशेष रूप से नाबालिगों से संबंधित है। वास्तव में, सभी उद्देश्यों और प्रयोजनों के लिए 'या नाबालिग' शब्दों को आई.पी.सी. की धारा 228ए की उप-धारा (2) के खंड (सी) से हटा दिया जाना चाहिए।

16. कष्टदायक मुद्दा जो हमें परेशान करता है, वह पीड़िता के निकट संबंधियों द्वारा मान्यता प्राप्त कल्याणकारी संस्थानों या संगठनों के अध्यक्ष या सचिव को नाम घोषित करने का अधिकार देने के संबंध में है। हमारे समक्ष प्रस्तुत की गई सामग्री के अनुसार आज तक ना तो केंद्र सरकार और ना हीं किसी राज्य सरकार ने ऐसे किसी समाज कल्याण संस्थान या संगठन को मान्यता दी है, जिन्हें रिश्तेदारों को प्राधिकरण देना चाहिए।

17. इस तकनीकी पहलू से निपटने से पहले कि किसे प्राधिकरण दिया जाना है, हम महसूस करते हैं कि पीड़िता के निकटतम परिजन के अधिकार के संबंध में सावधानी बरतने की आवश्यकता है। विकृत्त चित्त वाला व्यक्ति उतना ही देश का नागरिक होता है जितना कि एक समझदार व्यक्ति। विकृत चित्त वाला व्यक्ति जो इस तरह के जघन्य यौन अपराध का शिकार भी होता है, वह एक ऐसे आघात से पीड़ित होता है जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती है। विचारणीय मुद्दा यह है कि किन परिस्थितियों में रिश्तेदारों को पीड़िता के नाम और पहचान को प्राधिकृत करने की अनुमति दी जानी चाहिए?हमारे समक्ष यह आग्रह किया गया था कि कुछ मामलों में पीड़िता के नाम का खुलासा या प्रकाशन की अनुमति दी जानी चाहिए क्योंकि पीड़िता का नाम और चेहरा तब इस तरह के अन्य यौन अपराधों को रोकने के लिए एक इकट्ठा होने का स्थान बन सकता है। पीड़िता विरोध का प्रतीक बन जाती है या उसे एक प्रतिष्ठित व्यक्ति के रूप में माना जाता है। हम इस तर्क से बिल्कुल भी प्रभावित नहीं हैं। क्या उस व्यक्ति को जो मर चुका है या जो विकृत चित का है, एक प्रतीक बनने की अनुमति दी जानी चाहिए यदि ऐसा व्यक्ति स्वयं एक इकट्ठा होने का स्थान नहीं बनना चाहता है? हमारा यह भी विचार है कि जनमत और भावनाओं को जगाने के लिए पीड़िता की पहचान का खुलासा करना बिल्कुल भी आवश्यक नहीं है। यह एक गंभीर मुद्दा है जो जघन्य यौन संबंध की पीड़ितों से संबंधित है और उनसे संवेदनशीलता से निपटने की आवश्यकता है। इसके अलावा, हम सभी पूरी तरह से जानते हैं कि अपनी असली पहचान का खुलासा किए बिना *'निर्भया'* देश में अब तक के विरोध का सबसे प्रभावी प्रतीक बन गई है। यदि पीड़िता के अधिकारों की रक्षा के लिए कोई अभियान शुरू करना है और जनमत जुटाना है तो उसकी पहचान का खुलासा किए बिना ऐसा किया जा सकता है।

18. हम यह भी जोड़ सकते हैं कि इस आधुनिक युग में जहां हमने ऐसे मामलों से निपटा है जहां अपने पिता द्वारा बेटियों के साथ बलात्कार किया गया है, जहां बलात्कार की पीड़ितों विशेष रूप से नाबालिग पीड़ितों को अक्सर परिवार के सदस्यों या परिवार के दोस्तों द्वारा इस जघन्य अपराध का शिकार बनाया जाता है, यह अकल्पनीय नहीं है कि तथाकथित रिश्तेदार किसी संचार-माध्यम संस्था या किसी प्रकाशन प्रतिष्ठान से पैसे लेने सहित बाहरी कारणों से,जो पुस्तक प्रकाशित करना चाहता है पीड़िता के नाम को प्रकट कर सकते हैं। हम किसी भी तरह से माता-पिता की भूमिका पर टिप्पणी नहीं करना चाहते हैं, लेकिन हम इस प्रकार के एक भी मामले की अनुमति नहीं दे सकते हैं और व्यापक हित में हम महसूस करते हैं कि, निश्चित रूप से, पीड़िता का नाम या उसकी पहचान सक्षम प्राधिकारी की अनुमति के बिना, रिश्तेदारों के प्राधिकरण के तहत भी प्रकट नहीं की जानी चाहिए।

19. भारत संघ की ओर से यह आग्रह किया गया है कि "निकटतम संबंधी" शब्दों को वही परिभाषा देनी चाहिए जो भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 के अंतर्गत परिकल्पित है। हम इस विवाद में नहीं पड़ना चाहते। जैसा कि हमने बताया है, कुछ मामलों में, निकटतम संबंधियों का हित पीड़िता के हित के समान नहीं हो सकता है। ऐसी परिस्थितियों में, आवेदक निकटतम संबंधी नहीं हो सकता है, लेकिन बच्चे का "निकटतम मित्र" हो सकता है, जो इस तरह के आवेदन को आगे बढ़ाने का हकदार हो सकता है। यह न्यायालय या सक्षम प्राधिकारी को तय करना होगा कि "निकटतम मित्र" कौन है।

20. जैसा कि ऊपर बताया गया है, ना तो केंद्र सरकार और ना हीं किसी राज्य सरकार ने ऐसी किसी कल्याणकारी संस्था या संगठन को मान्यता दी है। आई.पी.सी. में कोई दिशा-निर्देश निर्धारित नहीं किए गए हैं कि ऐसे संगठन की प्रकृति क्या होगी और ऐसे संगठन का अध्यक्ष या सचिव बनाए जाने वाले व्यक्तियों की योग्यता क्या होगी। इन मामलों को अनिश्चित नहीं छोड़ा जा सकता है।

21. ऐसे मामले हो सकते हैं जहां पीड़िता की पहचान, यदि उसका नाम नहीं है, तो प्रकट करनी पड़ सकती है। ऐसे मामले हो सकते हैं जहाँ पीड़िता का मृत शरीर पाया जाता है। यह स्थापित हो जाता है कि पीड़िता के साथ बलात्कार किया गया था। पीड़िता की पहचान करना संभव नहीं हो सकता है। तब , जाहिर है कि उनकी तस्वीर को संचार-माध्यम में प्रकाशित करना होगा। यहां भी, हम निर्देश देंगे कि हालाँकि ऐसा किया जा सकता है,लेकिन इस तथ्य को प्रकटित करने की आवश्यकता नहीं है कि ऐसी पीड़िता को यौन अपराध के अधीन किया गया है। ऐसी अन्य स्थितियाँ हो सकती हैं जहाँ पीड़िता की पहचान का प्रकटीकरण करने में रिश्तेदार को उचित ठहराया जा सकता है। यदि ऐसी कोई

आवश्यकता उत्पन्न होती है, तो हम निर्देश देते हैं कि पहचान के प्रकटीकरण को अधिकृत करने के लिए आवेदन केवल संबंधित सत्र न्यायाधीश/दंडाधिकारी को किया जाना चाहिए और उक्त सत्र न्यायाधीश/दंडाधिकारी हमारे द्वारा निर्धारित कानून के आधार पर आवेदन पर निर्णय लेंगे। हम इस संबंध में संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत शक्ति का प्रयोग कर रहे हैं क्योंकि सरकार ने किसी भी सामाजिक या कल्याणकारी संस्थान/संगठन की पहचान नहीं की है और निर्धारित कानून को प्रशासित नहीं किया जा सकता है। हम निर्देश देते हैं कि यदि सरकार वास्तव में आई.पी.सी. की धारा 228ए (2)(सी) के तहत कार्रवाई करना चाहती है,तो उसे ऐसी समाज कल्याण संस्था या संगठन की पहचान करने से पहले इस संबंध में कुछ नियम या स्पष्ट मानदंड स्पष्ट रूप से निर्धारित करने चाहिए। संगठन की प्रकृति क्या होनी चाहिए?आवेदन कैसे किया जाना चाहिए?उस आवेदन से किस तरह निपटा जाना चाहिए?और एक स्पष्ट प्रक्रिया निर्धारित की जानी चाहिए। जब तक ऐसा नहीं किया जाता, तब तक हमारे निर्देश अभिभावी रहेंगे।

22. जहां तक आई.पी.सी. की धारा 228ए की उप-धारा (3) का संबंध है, हम यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि आई.पी.सी. स्पष्ट रूप से यह निर्धारित करता है कि कोई भी धारा 228ए के दायरे में आने वाली किसी भी कार्यवाही के संबंध में और सी. आर.पी.सी. की धारा 327 (2) के संदर्भ में किसी भी मामले को मुद्रित या प्रकाशित नहीं कर सकता है। ये बंद कक्ष में होने वाली कार्यवाही हैं और पीठासीन अधिकारी, न्यायालय के कर्मचारी, आरोपी, उसके अधिवक्ता, लोक अभियोजक, पीड़िता के अलावा कोई नहीं, अगर वह उपस्थित होना चाहती है या गवाह वहां होगा। यह सुनिश्चित करना उन सभी का परम कर्तव्य है कि न्यायालय में जो कुछ होता है उसका खुलासा बाहर न हो। इसका मतलब यह नहीं है कि ऐसे मामलों की कोई समाचार-प्रेषण नहीं हो सकती है। मुद्रणालय प्रतिवेदन कर सकता है कि मामला न्यायालय के समक्ष तय किया गया था और कुछ गवाहों से पूछताछ की गई थी। यह प्रतिवेदन कर सकता है कि मामला किस उद्देश्य के लिए सूचीबद्ध किया गया था, लेकिन यह प्रतिवेदन नहीं कर सकता कि न्यायालय के अंदर क्या हुआ या पीड़िता या गवाहों का बयान क्या था। साक्ष्य को प्रकटित नहीं किया जा सकता है। हम मुद्रणालय में प्रकाशन के मुद्दे पर अधिक विस्तार से चर्चा नहीं कर रहे हैं क्योंकि यह मुद्दा **निवेदिता झा** के मामले [2] में हमारा ध्यान आकर्षित कर रहा है, लेकिन यह स्पष्ट है कि किसी को भी धारा 327 (3) सी.आर.पी.सी का उल्लंघन करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है, जिसकी भाषा बहुत स्पष्ट और साफ है।

---

2 निवेदिता झा बनाम बिहार राज्य, 2018 की एसएलपी (सी) संख्या 24978

23. आई.पी.सी. की धारा 228ए की उप-धारा (3) किसी न्यायालय के समक्ष ऐसी कार्यवाही के संबंध में किसी भी मामले के मुद्रण या प्रकाशन को अपराध बनाती है जब तक कि इसका प्रकाशन ऐसे न्यायालय की पूर्व अनुमति से नहीं किया गया हो।

24. इस न्यायालय ने दो दशकों से भी अधिक समय पहले **गुरमीत सिंह** के मामले (ऊपर) में सावधानी बरतने का संकेत दिया था। इसमें पाया गया कि महिलाओं के खिलाफ यौन अपराध बढ़ रहे हैं। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यौन शोषण या हमले की पीड़ितों के साथ जांच और विचारण के दौरान बिना किसी संवेदनशीलता के व्यवहार किया जाता था। न्यायालय ने आगे कहा कि बलात्कार के मामलों का विचारण बंद कक्ष में होनी चाहिए और खुला विचारण एक अपवाद होना चाहिए। हालाँकि न्यायालय ने आई.पी.सी. की धारा 228ए का उल्लेख नहीं किया, लेकिन निम्नलिखित टिप्पणियां प्रासंगिक हैंः

> "21. हाल के वर्षों में महिलाओं के खिलाफ अपराध और विशेष रूप से बलात्कार बढ़ रहे हैं। यह एक विडंबना है कि जब हम सभी क्षेत्रों में महिलाओं के अधिकारों का जश्न मना रहे हैं, हम उनके सम्मान के लिए बहुत कम या कोई चिंता नहीं दिखाते हैं। यह यौन अपराधों के पीड़ितों की मानवीय गरिमा के उल्लंघन के प्रति समाज की उदासीनता रवैये का एक दुखद प्रतिबिंब है। हमें याद रखना चाहिए कि एक बलात्कारी न केवल पीड़िता की गोपनीयता और व्यक्तिगत अखंडता का उल्लंघन करता है, बल्कि अनिवार्य रूप से इस प्रक्रिया में गंभीर मनोवैज्ञानिक के साथ-साथ शारीरिक क्षति भी पहुंचाता है। बलात्कार केवल एक शारीरिक हमला नहीं है-यह अक्सर पीड़िता के पूरे व्यक्तित्व के लिए विनाशकारी होता है। एक हत्यारा अपने शिकार के भौतिक शरीर को नष्ट कर देता है, एक बलात्कारी असहाय महिला की आत्मा को अपमानित करता है। इसलिए न्यायालय बलात्कार के आरोप में एक अभियुक्त पर विचारण चलाते समय एक बड़ी जिम्मेदारी अपने कंधों पर उठाती है। उन्हें ऐसे मामलों से अत्यंत संवेदनशीलता के साथ निपटना चाहिए।
>
> 22. हाल ही में, न्यायालय में यौन उत्पीड़न की पीड़ितों के साथ उनके प्रति-परीक्षण के दौरान किए गए व्यवहार की बहुत आलोचना हुई है। तथ्यों की प्रासंगिकता के संबंध में साक्ष्य अधिनियम के प्रावधानों के बावजूद, कुछ बचाव पक्ष के अधिवक्ता बलात्कार के विवरण के रूप में अभियोक्ता से लगातार पूछताछ करने की रणनीति अपनाते हैं। पीड़िता से बलात्कार की घटना के

> विवरण को बार-बार दोहराने की आवश्यकता होती है, न कि अभिलेख पर तथ्यों को सामने लाने के लिए या उसकी विश्वसनीयता का परीक्षण करने के लिए, बल्कि उसके द्वारा दी गई घटनाओं की व्याख्या को मोड़ने का प्रयास करने की दृष्टि से विसंगतियों के लिए उसकी कहानी का परीक्षण करने के लिए ताकि वे उसके आरोपों से असंगत दिखाई दें। इसलिए, न्यायालय को मूक दर्शक के रूप में नहीं बैठना चाहिए, जबकि अपराध की पीड़िता से बचाव पक्ष द्वारा प्रति-परीक्षण की जा रही हो। उसे न्यायालय में साक्ष्य के अभिलेखन को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करना चाहिए। जबकि अभियुक्त को प्रति-परीक्षा के माध्यम से अभियोजक की सत्यता और उसके बयान की विश्वसनीयता का परीक्षण करने के लिए प्रत्येक अधिकार दिया जाना चाहिए, न्यायालय को यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि प्रति-परीक्षा को उत्पीड़न या अपराध की पीड़िता को अपमानित करने का साधन नहीं बनाया जाए। यह याद रखना चाहिए कि बलात्कार की शिकार महिला पहले ही एक दर्दनाक अनुभव से गुजर चुकी होती है और अगर उसे बार-बार, अपरिचित परिवेश में दोहराया जाता है कि उसके साथ क्या हुआ था, तो वह बहुत शर्मिंदा हो सकती है और यहां तक कि घबरा सकती है या बोलने में भ्रमित हो सकती है और उसकी खामोशी या भ्रमित भटकाव वाक्य को उसके साक्ष्य में "विसंगतियों और विरोधाभासों" के रूप में गलत तरीके से व्याख्या की जा सकता है।

सी.आर.पी.सी. की धारा 327 पर विचार करते हुए इस न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दियाः

> 24.....यह अपराध की पीड़िता व्यक्ति को थोड़ा सहज रहने और बहुत परिचित वातावरण में अधिक आसानी से प्रश्नों का उत्तर देने में सक्षम बनाएगा। बंद कक्ष में विचारण ना केवल अपराध की पीड़िता के आत्म-सम्मान और विधायी इरादे के अनुरूप होगा, बल्कि अभियोक्ता के साक्ष्य की गुणवत्ता में भी सुधार होने की संभावना है क्योंकि वह खुले तौर पर गवाही देने में इतनी झिझक या संकोच नहीं करेगी क्योंकि वह जनता की नज़रों के तहत एक खुली न्यायालय में हो सकती है। उसके साक्ष्य की बेहतर गुणवत्ता न्यायालयों को सच्चाई तक पहुंचने और न्यायालयों को झूठ से सच्चाई को अलग करने में सहायता करेगी, जहाँ तक संभव हो, यौन अपराध की पीड़िता को और

शर्मिंदगी से बचाने के लिए अपने आदेशों में अभियोक्ता के नाम का खुलासा करने से यथासंभव बचना चाहिए। अपराध के पीड़िता की गुमनामी को यथासंभव बनाए रखा जाना चाहिए। वर्तमान मामले में, विचारण न्यायालय ने अपील के तहत अपने आदेश में बार-बार पीड़िता के नाम का प्रयोग किया है, जब वह उसे अभियोक्ता के रूप में संदर्भित कर सकता था। हमें इस पहलू पर और कुछ नहीं कहने की आवश्यकता है और उम्मीद करते हैं कि विचारण न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 327 (2) और (3) के प्रावधानों का उदारतापूर्वक सहारा लेंगी। बंद कक्ष में बलात्कार के मामलों का विचारण नियम होना चाहिए और ऐसे मामलों में खुला विचारण एक अपवाद होना चाहिए। .

25. भूपिंदर शर्मा बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य[3] उन पहले मामलों में से एक है जहाँ आई.पी.सी. की धारा 228ए के लिए विशेष सन्दर्भ दिया गया था। इस न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दियाः

"2. हम पीड़िता के नाम का उल्लेख करने का प्रस्ताव नहीं करते हैं। भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 228-ए (संक्षेप में "आई.पी.सी".) कुछ अपराधों के पीड़ितों की पहचान के प्रकटीकरण को दंडनीय बनाती है। नाम या किसी भी मामले को मुद्रित या प्रकाशित करना जो किसी भी व्यक्ति की पहचान को ज्ञात कर सके, जिसके खिलाफ धारा 376,376-ए, 376-बी, 376-सी या 376-डी के तहत अपराध का अभिकथन किया जाता है या पाया गया है, उसे दंडित किया जा सकता है। यह सच है कि प्रतिबंध उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्णय के मुद्रण या प्रकाशन से संबंधित नहीं है। लेकिन किसी यौन अपराध की पीड़िता के सामाजिक उत्पीड़न या बहिष्कार को रोकने के सामाजिक उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए, जिसके लिए धारा 228-ए लागू की गई है, यह उचित होगा कि निर्णयों में, चाहे वह उच्च न्यायालय का हो या निचली न्यायालय का, पीड़िता का नाम इंगित नहीं होना चाहिए। हमने निर्णय में उसे "पीड़िता" के रूप में वर्णित करने का विकल्प चुना है।

इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि आई.पी.सी. की धारा 228ए के तहत लगाया गया प्रतिबंध धारा 228ए के स्पष्टीकरण के कारण उच्च न्यायालयों

---

3 (2003) 8 एससीसी 551

और सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों के मुद्रण या प्रकाशन पर लागू नहीं होता है। तथापि, पीड़ितों के निवारण या पीड़ितों को बहिष्कृत करने के सामाजिक उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए, यह उचित होगा कि सभी न्यायालयों अर्थात विचारण न्यायालयों, उच्च न्यायालयों और सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों में पीड़िता का नाम इंगित नहीं किया जाना चाहिए। यह बड़ी संख्या में मामलों में दोहराया गया है और हमें सभी का उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है।

26. अजू वर्गीज बनाम केरल राज्य[4] के मामले में केरल उच्च न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दियाः

> "8. उच्चतम न्यायालय द्वारा बताए गए वैधानिक प्रावधान से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि इस प्रावधान का उद्देश्य विशेष रूप से यह सुनिश्चित करना था कि पीड़िता को उसकी पहचान के प्रकटीकरण के परिणामस्वरुप सामाजिक उत्पीड़न या बहिष्कार से और अधिक पीड़ा न हो। यह स्पष्ट है कि, इसका उद्देश्य उसे मनोवैज्ञानिक और सामाजिक यातना या मानसिक पीड़ा से बचाना है, जो यौन हिंसा की दुर्भाग्यपूर्ण घटना के बाद हो सकती है। समाज का कर्तव्य है कि वह यौन हिंसा के पीड़ितों का समर्थन करे और यह सुनिश्चित करे कि वे सामान्य स्थिति में वापस आएं और सामान्य जीवन जीना आरंभ करें। इस तरह की हिंसा के पीड़ितों को निजता के उनके मौलिक अधिकार से वंचित नहीं किया जाता है और अनावश्यक सार्वजनिक टिप्पणियों से उनका बचाव किया जा सकता है। निश्चित रूप से, यह एक स्वीकृत सामाजिक उद्देश्य की पूर्ति करता है और इसमें सार्वजनिक हित का एक तत्व शामिल है। धारा इतनी स्पष्ट, असंदिग्ध है और इसके उल्लंघन का परिणाम अपरिहार्य है और यह सवाल कि क्या प्रकटीकरण जानबूझकर,सद्भावनापूर्वक या विधि के ज्ञान आभाव में किया गया था, प्रासंगिकता नहीं है। इसलिए, आई.पी.सी. की धारा 228ए का प्रावधान जो किसी अभियुक्त द्वारा नाम के प्रकटीकरण को प्रतिबंधित करता है, पूर्ण है और इसे मंदित नहीं किया जा सकता है। .

27. इस पहलू से अलग होने से पहले, हम एक ऐसी स्थिति से निपटना चाहेंगे जिसकी परिकल्पना विधि निर्माताओं ने नहीं की थी। जैसा कि हमने ऊपर अभिनिर्धारित किया है, आई.पी.सी. की धारा 228ए पीड़िता के नाम या पहचान को प्रकटित किये जाने पर एक स्पष्ट प्रतिबंध लगाती है। यदि अभियुक्त को बरी कर दिया जाता है और

---

4 2017 की सीआरएल एमसी संख्या 5247 का निर्णय 27.09.2018 को लिया गया

अपराध की पीड़ित धारा 372 सी.आर.पी.सी के तहत अपील दायर करना चाहती है तो क्या होगा?क्या वह याचिका के ज्ञापन में अपने नाम को प्रकट करने के लिए बाध्य है? हमारा स्पष्ट रूप से यह विचार है कि ऐसी पीड़िता न्यायालय में अनुरोध करते हुए एक आवेदन दायर कर सकती है कि उसे छद्म नाम जैसे 'एक्स' या 'वाई' या या ऐसी कोई अन्य कोडित पहचान जिसे वह चुन सकती है, के तहत याचिका दायर करने की अनुमति दी जाए। हालाँकि, उसे कोई अन्य नाम देने की अनुमति नहीं दी जा सकती है जो अप्रत्यक्ष रूप से किसी अन्य व्यक्ति को नुकसान पहुँचा सकता है। कुछ ऐसे दस्तावेज हो सकते हैं जिनमें उसके नाम को प्रकट करना होगा; उदाहरण के लिए, मुख्तारनामा और शपथ पत्र जिन्हें न्यायालय के नियमों के अनुसार दायर करना पड़ सकता है। न्यायालय को आम तौर पर ऐसे आवेदक को छद्म नाम से याचिका/अपील दायर करने की अनुमति देनी चाहिए। जहाँ कोई पीड़िता अपील दायर करती है, हम निर्देश देते हैं कि ऐसी पीड़िता के नाम का खुलासा न करने के लिए आवेदन के साथ अपना नाम 'एक्स' या 'वाई' दिखाकर ऐसी अपील दायर कर सकती है। अपील के साथ दायर किए जाने वाले सीलबंद लिफाफे में वह दस्तावेज़ संलग्न कर सकती है, जिसमें वह अपीलीय न्यायालय के नियमों के अनुसार अपनी पहचान प्रकट कर सकती है। न्यायालय विवरणों को सत्यापित कर सकता है लेकिन सार्वजनिक अधिकार क्षेत्र में रखी गई सामग्री में पीड़िता के नाम का खुलासा नहीं किया जाएगा। इस तरह के आवेदन की सुनवाई न्यायालय द्वारा चैंबर्स में की जानी चाहिए और मामले का निर्णय हो जाने तक पीड़िता का नाम वाद-सूची में भी नहीं दिखाया जाना चाहिए। पीड़िता के नाम और पहचान प्रकट करने वाले कोई भी दस्तावेज सार्वजनिक अधिकार क्षेत्र में नहीं होने चाहिए।

<u>द्वितीय भाग</u>

28. निर्णय के इस भाग में हम उन मुद्दों पर विचार करेंगे जो पॉक्सो के दायरे में आने वाले पीड़िता के नाम और पहचान का प्रकट ना किये जाने से संबंधित हैं। शुरुआत में, हम इस बात पर ध्यान दे सकते हैं कि वयस्क पीड़ितों से संबंधित निर्णय के पहले भाग में हमने जो कारण दिए हैं, वे नाबालिग पीड़ितों पर और भी अधिक बल के साथ लागू होते हैं।

29. एक नाबालिग जिसे यौन शोषण का सामना करना पड़ता है, उसे व्यस्क पीड़िता से भी अधिक संरक्षित करने की आवश्यकता होती है क्योंकि एक व्यस्क पीड़िता होने के नाते अभी भी समाज द्वारा किए गए सामाजिक बहिष्कार और मानसिक उत्पीड़न का सामना करने में सक्षम हो सकती है, लेकिन एक नाबालिग पीड़िता को ऐसा करना मुश्किल होगा।

नाबालिग पीड़िता के खिलाफ होने वाली ज्यादातर अपराधों की सूचना भी बहुत बार नहीं दी जाती है,क्यों कि अपराध का अपराधकर्ता पीड़िता के परिवार का सदस्य या एक करीबी मित्र होता है। अपराध को दबाने के प्रयास किए जाते हैं। अब यह माना जाता है कि एक बच्चे को अतिरिक्त सुरक्षा की आवश्यकता होती है। भारत संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार सम्मेलन, 1989 का एक हस्ताक्षरकर्ता है और संसद ने वर्ष 2012 में पॉक्सो को अधिनियमित करना उचित समझा, जो विशेष रूप से सभी बच्चों के खिलाफ यौन अपराधों से निपटता है। यह अधिनियम लैंगिक रूप से तटस्थ है और हम इस भाग में जो कुछ भी कहेंगे वह सभी बच्चों पर लागू होगा।

30. पॉक्सो का अध्याय VI बच्चे के बयान दर्ज करने से संबंधित प्रक्रिया से संबंधित है। धारा 24 आरक्षी द्वारा दर्ज किए गए बयान से संबंधित है। हमारे उद्देश्य के लिए धारा 24 की उप-धारा (5) प्रासंगिक है जो निम्नानुसार हैः

"धारा 24-एक बच्चे के बयान की रिकॉर्डिंग।

XXX XXX XXX

XXX XXX XXX

(5) पुलिस अधिकारी यह सुनिश्चित करेगा कि बच्चे की पहचान सार्वजनिक मीडिया से संरक्षित है, जब तक कि बच्चे के हित में विशेष न्यायालय द्वारा अन्यथा निर्देश नहीं दिया जाता है।

धारा 25 पॉक्सो कथन करता है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के तहत दर्ज बच्चे के बयान जो एक अधिवक्ता को उपस्थित होने की अनुमति देते हैं, बच्चों के मामले में लागू नहीं होंगे। पॉक्सो के तहत विचारण विशेष न्यायालय द्वारा संचालित किए जाते हैं जिसके बच्चों के अनुकूल होने की उम्मीद की जाती हैं और विशेष रूप से यह प्रावधान है कि विशेष न्यायालय बच्चे से आक्रामक पूछताछ या चरित्र हनन की अनुमति नहीं देगी। धारा 33 की उप-धारा (7) जो प्रासंगिक है, निम्नानुसार हैः

"धारा 33-विशेष न्यायालय की प्रक्रिया और शक्तियाँ।

XXX XXX XXX

(7) विशेष न्यायालय यह सुनिश्चित करेगा कि अन्वेषण या विचारण के दौरान किसी भी समय बच्चे की पहचान प्रकट ना की जाएः

बशर्ते कि लिखित रूप में अभिलिखित किये जाने वाले कारणों के लिए, विशेष न्यायालय इस तरह के प्रकटीकरण की अनुमति दे सकता है, यदि उसकी राय में ऐसा प्रकटीकरण बच्चे के हित में है।

स्पष्टीकरण- इस उप-धारा के प्रयोजनों के लिए, बच्चे की पहचान में बच्चे के परिवार, विद्यालय, संबंधियों,पड़ोस या कोई अन्य जानकारी शामिल होगी जिसके द्वारा बच्चे की पहचान प्रकट की जा सकती है। .

धारा 37 प्रावधान करता है कि पॉक्सो के तहत सभी विचारण को बंद कक्ष में आयोजित किये जाने चाहिए जब तक कि विशेष न्यायालय द्वारा दर्ज किए जाने वाले कारणों से अन्यथा विशेष रूप से निर्णय नहीं लिया जाता है। धारा 24 (5) और धारा 33 (7) के अनावृत वाचन से यह स्पष्ट होता है कि अन्वेषण या विचारण के दौरान किसी भी समय बच्चे के नाम और पहचान का खुलासा नहीं किया जाना चाहिए और बच्चे की पहचान जनता या मीडिया से सुरक्षित रखी जानी चाहिए। इसके अलावा, धारा 37 प्रावधान करता है कि विचारण बंद कक्ष में चलाया जाना है जिसका अर्थ है कि मीडिया उपस्थित नहीं हो सकती है। पॉक्सो का पूरा उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि बच्चे की पहचान का खुलासा तब तक न किया जाए जब तक कि विशेष न्यायालय लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों से इस तरह के प्रकटीकरण की अनुमति न दे। यह प्रकटीकरण केवल तभी किया जा सकता है जब यह बच्चे के हित में हो और अन्यथा नहीं। एक ऐसा मामला जहां बच्चे की पहचान का खुलासा करना आवश्यक हो सकता है, वह तब हो सकता है जहां कोई बच्चा यौन अपराध का पीड़ित पाया जाता है और बच्चे की पहचान अन्वेषण दल द्वारा भी स्थापित नहीं किया जा सकता हो। ऐसे मामले में, अन्वेषण अधिकारी या विशेष न्यायालय पहचान स्थापित करने के लिए बच्चे की तस्वीर प्रकाशित करने की अनुमति दे सकता है। यह बिल्कुल स्पष्ट है कि पहचान के प्रकटीकरण की अनुमति विशेष न्यायालय द्वारा केवल तभी दी जा सकती है जब यह बच्चे के हित में हो और किसी अन्य परिस्थिति में न हो। हमारा विचार है कि बच्चे को विरोध का प्रतीक बनाने के लिए बच्चे के नाम का प्रकटीकरण सामान्य रूप से बच्चे के हित में नहीं माना जा सकता है।

31. विद्वान न्यायमित्र द्वारा यह तर्क दिया गया है कि बच्चे के हित को परिभाषित नहीं किया गया है। हमारा मानना है कि यह ना तो संभव है और ना हीं यह स्पष्ट रूप से निर्धारित करना उचित होगा कि "बच्चे के हित" वाक्यांश का अर्थ क्या है। हालाँकि, हमने यहाँ ऊपर कुछ उदाहरण दिए हैं और हम विशेष न्यायालय के हाथों को बांधना नहीं चाहते हैं, जिन्हें ऐसे मामलों से निपटना पड़ सकता है। प्रत्येक मामले को अपने स्वयं के तथ्यात्मक परिदृश्य में निपटाना होगा।

पॉक्सो की धारा 23 में ऐसे प्रावधान हैं जो मीडिया की प्रक्रिया से संबंधित हैं। यह इस प्रकार हैः

"धारा 23-मीडिया के लिए प्रक्रिया- .

(1) कोई भी व्यक्ति पूर्ण और प्रामाणिक जानकारी के बिना किसी भी प्रकार के मीडिया या स्टूडियो या फोटोग्राफिक सुविधाओं से किसी भी बच्चे पर कोई प्रतिवेदन या टिप्पणी प्रस्तुत नहीं करेगा, जिसका प्रभाव उसकी प्रतिष्ठा को कम करने या उसकी गोपनीयता का उल्लंघन करने का हो सकता है।

(2) किसी भी मीडिया में कोई भी रिपोर्ट बच्चे की पहचान को प्रकट नहीं करेगी, जिसमें उसका नाम, पता, तस्वीर, परिवार का विवरण,विद्यालय, पड़ोस या कोई अन्य विवरण शामिल है जिससे बच्चे की पहचान का खुलासा हो सकता हैः

बशर्ते कि लिखित रूप में अभिलिखित किए जाने वाले कारणों के लिए, अधिनियम के तहत मामले का विचारण करने में सक्षम विशेष न्यायालय इस तरह के प्रकटीकरण की अनुमति दे सकता है, अगर उसकी राय में ऐसा प्रकटीकरण बच्चे के हित में है।

(3) संचार-माध्यम या प्रसारण-कक्ष या छायाचित्रण सुविधाओं का प्रकाशक या स्वामी अपने कर्मचारी के कृत्यों और चूक के लिए संयुक्त रूप से एवं पृथक रूप से उत्तरदायी होगा।

(4) कोई भी व्यक्ति जो उप-धारा (1) या उप-धारा (2) के प्रावधानों का उल्लंघन करता है, वह उस अवधि के लिए किसी भी प्रकार के कारावास से दंडित होने के लिए उत्तरदायी होगा जो छह महीने से कम नहीं होगी, लेकिन जो एक वर्ष तक बढ़ सकती है या जुर्माना या दोनों से दंडित किया जा सकता है। .

धारा 23 की उप-धारा (1) किसी भी व्यक्ति को बिना पूरी और प्रामाणिक जानकारी के किसी भी रूप में किसी भी बच्चे पर कोई भी प्रतिवेदन अभिलिखित करने या कोई भी टिप्पणी करने से रोकती है, चाहे वह लिखित, छायाचित्रण या चित्रमुद्रण हो। कोई भी व्यक्ति या संचार-माध्यम ऐसी कोई टिप्पणी नहीं कर सकता है जिसका प्रभाव बच्चे की

प्रतिष्ठा को कम करने या बच्चे की निजता का हनन करने वाला हो। धारा 23 की उप-धारा (2) में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि किसी भी संचार-माध्यम में कोई भी प्रतिवेदन बच्चे की पहचान का खुलासा नहीं करेगी, जिसमें नाम, पता, तस्वीर, परिवार का विवरण, विद्यालय, पड़ोस या कोई अन्य विवरण शामिल है जिससे बच्चे का पहचान प्रकट हो सकता है। यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि विधायिका का इरादा यह था कि बच्चे की पहचान प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रकटित नहीं की जानी चाहिए। वाक्यांश 'किसी भी अन्य विवरण' को सबसे व्यापक आयाम देना होगा और इसे केवल *सामान्य रूप* से नहीं पढ़ा जा सकता है। विधायिका का इरादा यह है कि बच्चे की निजता और प्रतिष्ठा को नुकसान न पहुंचे। इसलिए, कोई भी जानकारी जिससे बच्चे का पहचान प्रकट हो सकता है, संचार-माध्यम द्वारा उजागर नहीं किया जा सकता है। संचार माध्यम को न केवल सतर्क रहना होगा, बल्कि यह सुनिश्चित करने के लिए संचार माध्यमों पर यह दायित्व डाला गया है कि वह कुछ भी न करे और ऐसी कोई जानकारी न दे जिससे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से बच्चे का पहचान प्रकट हो।

32. इसमें कोई संदेह नहीं है कि संचार-माध्यम का कर्तव्य है कि वह किए गए प्रत्येक अपराध का प्रतिवेदन करे। संचार-माध्यम बच्चों के खिलाफ बलात्कार और यौन अपराधों के मामले में पीड़िता के नाम और पहचान का खुलासा किए बिना ऐसा कर सकता है। संचार-माध्यम के पास न केवल अधिकार है बल्कि ऐसे सभी मामलों का प्रतिवेदन करने का दायित्व भी है। हालांकि, संचार-माध्यम को सावधान रहना चाहिए कि इसे सनसनीखेज न बनाया जाए। मीडिया को पीड़िता से बात करने से बचना चाहिए क्योंकि हर बार जब पीड़िता दुख की कहानी दोहराती है, तो पीड़िता फिर से उस आघात से गुजरती है जिससे वह गुजर चुकी है। ऐसे मामलों का प्रतिवेदन पीड़ितों, वयस्कों और बच्चों दोनों के सर्वोत्तम हित को ध्यान में रखते हुए संवेदनशील रूप से की जानी चाहिए। ऐसे मामलों को सनसनीखेज बनाने से टेलीविजन रेटिंग पॉइंट (टी. आर. पी.) तो प्राप्त हो सकते हैं लेकिन इससे संचार-माध्यम के विश्वसनीयता पर कोई असर नहीं पड़ता है।

33. जहाँ कोई बच्चा एक छोटे गाँव से सम्बन्ध रखता है,वहाँ गाँव के नाम का प्रकटीकरण भी धारा 23 (2) पॉक्सो के प्रावधानों का उल्लंघन कर सकता है क्योंकि इसके लिए केवल एक व्यक्ति को गाँव जाने और यह पता लगाने की आवश्यकता होगी कि बच्चा कौन है। दिल्ली जैसे बड़े शहरों और महानगरों में शहर के नाम के प्रकटीकरण से बच्चे की पहचान प्रकटित नहीं हो सकता है, लेकिन कॉलोनी और जिस क्षेत्र में बच्चा रह रहा है या जिस विद्यालय में बच्चा पढ़ रहा है, उसके संबंध में कोई और विवरण आसानी से बच्चे की

पहचान का पता लगाने के लिए पर्याप्त है (भले ही मकान संख्या ना दी गई हो)। हमारे सुविचारित विचार में, संचार-माध्यम ना केवल बच्चे का पहचान को प्रकट ना करने के लिए बाध्य है, बल्कि विधि द्वारा ऐसी किसी भी सामग्री का खुलासा नहीं करने का आदेश दिया जाता है जिससे बच्चे का पहचान प्रकट हो सकता है। इसका कोई भी उल्लंघन धारा 23 (4) के तहत अपराध होगा।

34. विद्वान न्यायमित्र ने आग्रह किया कि प्रकाशन के प्रयोजनों के लिए बच्चे का अर्थ केवल जीवित बच्चे से होना चाहिए। उसका तर्क यह प्रतीत होता है कि जब बच्चा मर चुका होता है तो बच्चे के नाम और पहचान को प्रकटित किया जा सकता है। उसका प्रस्तुतिकरण इस धारणा पर आधारित है कि यदि बच्चे के नाम और पहचान प्रकटित किया जाता है, तो जनभावना उत्पन्न हो सकती है और एक आंदोलन बच्चे के लिए न्याय प्राप्त करने हेतु शुरू किया जा सकता है। उनके अनुसार, यदि मृतक पीड़ित बच्चे के नाम का प्रकटीकरण नहीं किया जाता है तो इस तरह का समर्थन प्राप्त करना मुश्किल है। हम इस प्रस्तुति से कदापि भी सहमत नहीं हैं। वही तर्क जो हमने पीड़ितों के लिए ऊपर दिया है, मृत पीड़ितों पर भी लागू होगा। मृत पीड़ितों के मामले में, हमें एक अन्य कारक से निपटना होगा। हमें इस महत्वपूर्ण मुद्दे से निपटना होगा कि मृतकों की भी अपनी गरिमा है। उन्हें केवल इसलिए गरिमा से वंचित नहीं किया जा सकता क्योंकि वे मर चुके हैं।

35. हालाँकि इस मामले में हम पीड़ितों के मामलों से निपट रहे हैं, लेकिन हम किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015 की धारा 74 का संदर्भ दे सकते हैं, जो इस प्रकार हैः .

> **"धारा 74 बच्चों की पहचान प्रकट करने पर प्रतिषेध-**
>
> (1) किसी भी समाचार पत्र, पत्रिका, समाचार-सूची या ध्वनि-दृश्य संचार या किसी भी जांच या अन्वेषण या न्यायिक प्रक्रिया के संबंध में संचार के अन्य रूपों में कोई भी प्रतिवेदन नाम, पता या विद्यालय या किसी अन्य विवरण को प्रकट नहीं करेगी, जिससे कानून के साथ संघर्षरत किसी बच्चे या देखभाल और सुरक्षा की आवश्यकता वाले बच्चे या ऐसे मामले में शामिल किसी अपराध के पीड़ित बच्चे या गवाह की पहचान हो सकती है, जो उस समय प्रवृत्त किसी अन्य कानून के तहत ऐसे मामलों में शामिल है, और ना हीं ऐसे किसी बच्चे की तस्वीर प्रकाशित की जाएगीः
>
> बशर्ते कि लिखित रूप में अभिलिखित किए जाने वाले कारणों के लिए, बोर्ड या समिति, जैसा भी मामला हो, जांच करने से इस तरह के प्रकटीकरण की

अनुमति मिल सकती है, अगर उसकी राय में ऐसा प्रकटीकरण बच्चे के सर्वोत्तम हित में है।

(2) पुलिस चरित्र प्रमाण पत्र के प्रयोजनार्थ या अन्यथा उन मामलों में बच्चे के किसी भी अभिलेख को प्रकट नहीं करेगी जहाँ मामले को बंद कर दिया गया है या निपटाया गया है।

(3) उप-धारा (1) के प्रावधानों का उल्लंघन करने वाला कोई भी व्यक्ति छह महीने तक के कारावास या दो लाख रुपये तक के जुर्माने या दोनों से दंडनीय होगा। .

36. नाम, पता, विद्यालय या अन्य विवरण जो कानून से संघर्षरत बच्चे की पहचान का कारण बन सकते हैं, संचार-माध्यम में प्रकट नहीं किए जा सकते हैं। ऐसे बच्चे की कोई तस्वीर प्रकाशित नहीं की जा सकती है। एक बच्चा जो कानून से संघर्षरत नहीं है लेकिन पीड़ित है विशेष रूप से यौन अपराध से, उसे इस सुरक्षा की और भी अधिक आवश्यकता होती है।

37. **सुभाष चंद्र राय बनाम सिक्किम राज्य**[5] के मामले में सिक्किम उच्च न्यायालय नें इस मुद्दे से निपटने के लिए निम्नानुसार निर्देश दिया:

"27 .....प्रावधान के अधिदेश को और अधिक स्पष्टीकरण की आवश्यकता नहीं है। यह कहना पर्याप्त है कि ना तो कानून से संघर्षरत एक बच्चे के लिए, या देखभाल की आवश्यकता वाले बच्चे के लिए और ना हीं संरक्षण की आवश्यकता वाले बच्चे, या बाल पीड़िता, या मामले में शामिल अपराध के गवाह का, नाम, पता, विद्यालय या अन्य विवरणों का खुलासा किया जाएगा, जिससे बच्चे का पता लगाया जा सकता है, पाया जा सकता है और पहचाना जा सकता है, जब तक कि पहले निकाले गए परंतुक में दिए गए कारणों के लिए ना हो । पुलिस और मीडिया के साथ-साथ न्यायपालिका को ऐसे मामलों में समान रूप से संवेदनशील होने की आवश्यकता है और यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि कानून के अधिदेश का अक्षरशः पालन किया जाए। .

---

5 2018 सी आर आई एल जे 3146

38. **बिजॉय बनाम पश्चिम बंगाल राज्य**[6] के मामले में, कलकत्ता उच्च न्यायालय ने पॉक्सो के प्रावधानों पर विचार करते समय कारणों को निर्धारित करते हुए एक विस्तृत निर्णय दिया है और कहा है कि ना तो अन्वेषण के दौरान और ना हीं विचारण के दौरान पीड़िता के नाम का खुलासा किया जाना चाहिए।

कलकत्ता उच्च न्यायालय ने सुनिश्चित करने के लिए अन्य निर्देश भी दिए हैं कि कानून के प्रावधानों का अक्षरशः पालन किए जाएँ और पीड़िता बच्चे के मौलिक अधिकारों और अन्य बुनियादी मानवाधिकारों की रक्षा की जाए। हम इन सभी निर्देशों से सहमत हैं। हालाँकि इन निर्देशों में निपटाए गए कुछ मुद्दे इस मामले में सख्ती से नहीं उठते हैं, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि हम बच्चों के अधिकारों के साथ काम कर रहे हैं, हम कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा जारी किए गए निर्देशों को इस फैसले के अनुलग्नक-1 के रूप में संलग्न कर रहे हैं। हम देश के सभी उच्च न्यायालयों की सभी किशोर न्याय समिति के सभी अध्यक्षों और सदस्यों से अनुरोध करते हैं कि वे कलकत्ता उच्च न्यायालय के निर्णय और उसमें जारी किए गए निर्देशों को ध्यान से परखें और वे प्रत्येक उच्च न्यायालय/राज्य की विशेष आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए समान निर्देश निर्गत कर सकते हैं।

39. अलग होने से पहले हम बच्चों के अनुकूल न्यायालयों की आवश्यकता पर जोर देना चाहेंगे। पॉक्सो बच्चों के अनुकूल अदालतों की स्थापना को अनिवार्य करता है। हालांकि इस संबंध में कुछ प्रगति हुई है, लेकिन अभी भी बहुत कुछ करने की आवश्यकता है।

40. न्यायालय में प्रवेश करने वाला कोई भी वादी न्यायालय के वातावरण से भयभीत महसूस करता है। बच्चे और महिलाएं, विशेष रूप से जो यौन उत्पीड़न का शिकार हुए हैं, वे न्यायालयों के माहौल से लगभग अभिभूत हैं। वे दरी हुई हैं। वे इतनी घबराई हुई हैं कि वे कभी-कभी अपराध की प्रकृति का सटीक वर्णन भी नहीं कर पाती हैं। जब उनसे शत्रुतापूर्ण और डराने-धमकाने वाले तरीके से प्रति-परीक्षण की जाती है तो घबराहट बढ़ जाती है और सच्चाई सामने नहीं आ पाती है।

41. इसलिए यह आवश्यक है कि हमारे पास ऐसे न्यायालय हों जो बच्चों के अनुकूल हों। धारा 33 (4) पॉक्सो विशेष न्यायालय को यह सुनिश्चित करने का आदेश देती है कि न्यायालय में बच्चों के अनुकूल वातावरण हो। धारा 36 में कहा गया है कि बच्चे को गवाही देते समय आरोपी को नहीं देखना चाहिए। यह सुनिश्चित करने के लिए है कि बच्चा अपराध

---

6 2018 सी आर आई एल जे 3893

के कथित अपराधी को देखकर डर ना जाए। इसलिए,जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है,विचारण बंद कमरे में किए जाने हैं। इसलिए ऐसी न्यायालयों की आवश्यकता है जो विशेष रूप से बच्चों के अनुकूल हों और बाल पीड़िताओं और विधि की आवश्यकताओं को पूरा करें। 42. इन न्यायालयों का उपयोग न केवल पॉक्सो के तहत मामलों की सुनवाई के लिए किया जाना चाहिए, बल्कि महिलाओं के खिलाफ बलात्कार के मामलों की सुनवाई के लिए विचारण न्यायालय के रूप में भी उपयोग किया जा सकता है। वास्तव में यह बच्चों और महिलाओं के हित में और न्याय के हित में होगा यदि देश के सभी जिलों में जल्द से जल्द वन स्टॉप सेंटर भी स्थापित किए जाएं। इन वन स्टॉप केंद्रों का उपयोग केंद्रीय पुलिस थाने के रूप में किया जा सकता है जहां शहर/कसबे में महिलाओं और बच्चों के खिलाफ सभी अपराध दर्ज किए जाते हैं। उनके पास अच्छी तरह से प्रशिक्षित कर्मचारी होने चाहिए जो यौन शोषण से गुजरने वाले बच्चों और महिलाओं की जरूरतों के प्रति संवेदनशील हों। इन कर्मचारियों को यह सुनिश्चित करने के लिए कि वे पीड़ितों से सहानुभूतिपूर्ण एवं संवेदनशील तरीके से बात करें पर्याप्त प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। परामर्शदाताओं और मनोचिकित्सकों को भी इन केंद्रों पर कॉल पर उपलब्ध होना चाहिए ताकि यदि आवश्यक हो तो पीड़ितों को परामर्श दिया जाए और कुछ मामलों में यह उचित होगा कि परामर्शदाता पीड़ितों से उस तरीके से पूछताछ करें जिसमें उन्हें ऐसे अपराधों के पीड़ितों को संभालने के लिए प्रशिक्षित किया गया है। इन वन स्टॉप केन्द्रों में पीड़ितों को तत्काल चिकित्सा सहायता प्रदान करने के लिए पर्याप्त चिकित्सा सुविधाएं भी होनी चाहिए और पीड़ितों की चिकित्सा जांच केन्द्र में ही की जा सकती है। इन वन स्टॉप केंद्रों में वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग की सुविधा भी उपलब्ध होनी चाहिए जहां पीड़ितों के बयान को अनिवार्य रूप से सीआरपीसी की धारा 164 के तहत वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग सुविधाओं का उपयोग करके अभिलिखित किया जा सकता है और पीड़ितों को दंडाधिकारी के न्यायालय में पेश करने की आवश्यकता न हो। इन वन स्टॉप केंद्रों में न्यायालयकक्ष होने चाहिए जिनका उपयोग ऐसे मामलों की सुनवाई के लिए किया जा सके। जहाँ तक संभव हो ये केंद्र न्यायालयपरिसर के भीतर नहीं होने चाहिए बल्कि न्यायालयपरिसर के पास होने चाहिए ताकि अधिवक्ताओं को भी असुविधा न हो। नतीजतन, इस तरह के अपराधों के पीड़ितों को कभी भी न्यायालयपरिसर में नहीं जाना पड़ेगा, जिसके परिणामस्वरूप पीड़ितों के अनुकूल विचारण चलेगा। ऐसा केन्द्र जो पहले ही एक बार हैदराबाद में "BHAROSA" स्थापित किया जा चुका है। इसका उपयोग देश में अन्य वन स्टॉप केंद्रों के लिए एक आदर्श के रूप में किया जा सकता है।

43. उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, हम निम्नलिखित निर्देश निर्गत करते हैंः

1. कोई भी व्यक्ति पीड़िता का नाम प्रिंट, इलेक्ट्रॉनिक, सोशल मीडिया आदि में मुद्रित या प्रकाशित नहीं कर सकता है या यहां तक कि दूरस्थ तरीके से भी ऐसे किसी भी तथ्य को प्रकट नहीं कर सकता है जिससे पीड़िता की पहचान की जा सके और जिससे उसकी पहचान बड़े पैमाने पर जनता को पता चल सके।

2. ऐसे मामलों में जहाँ पीड़िता की मृत्यु हो चुकी है या वह अस्वस्थ मन वाला है, वहां पीड़िता का नाम या उसकी पहचान को उदघटित तब तक नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि उसकी पहचान के प्रकटीकरण को उचित ठहराने वाली परिस्थितियां उपलब्ध ना हों, जिसका निर्णय सक्षम प्राधिकारी द्वारा किया जाएगा, जो वर्तमान में सत्र न्यायाधीश है।

3. भारतीय दंड संहिता की धारा 376,376 ए, 376 एबी, 376 बी, 376 सी, 376 डी, 376 डीए, 376 डीबी या 39 की धारा 376 ई तथा पोक्सो के तहत अपराधों से संबंधित प्रथम सूचना प्रतिवेदनों को सार्वजनिक अधिकार क्षेत्र में नहीं रखा जाएगा।

4. यदि कोई पीड़ित दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 372 के तहत अपील दायर करती है, तो पीड़िता के लिए अपनी/अपना पहचान को प्रकट करना आवश्यक नहीं है और अपील को विधि द्वारा निर्धारित तरीके से निपटाया जाएगा।

5. पुलिस अधिकारियों को उन सभी दस्तावेजों को, जिनमें पीड़िता के नाम का प्रकटीकरण किया गया है, जहां तक संभव हो, एक सीलबंद लिफाफे में रखना चाहिए और इन दस्तावेजों को समरूप दस्तावेजों से प्रतिस्थापित करना चाहिए जिसमें पीड़ित का नाम सभी अभिलेखों में हटा दिया गया है, जिनकी सार्वजनिक अधिकार क्षेत्र में बारीकी से जाँच की जा सकती है।

6. सभी अधिकारियों जिनके समक्ष अन्वेषण निकाय या न्यायालय द्वारा पीड़ित के नाम का प्रकटीकरण किया जाता है, वे भी पीड़िता का नाम और पहचान गुप्त रखने के लिए कर्तव्यबद्ध हैं और प्रतिवेदन को छोड़कर किसी भी तरह से इसको प्रकट ना करें, जिसे केवल सीलबंद लिफाफे में अन्वेषण निकाय या न्यायालय को भेजा जाना चाहिए।

7. आई.पी.सी. की धारा 228 ए (2) (सी) के तहत मृत पीड़ित या विकृत चित्त वाले पीड़ित की पहचान के प्रकटीकरण को अधिकृत करने के लिए निकटतम

सम्बंधी द्वारा आवेदन केवल संबंधित सत्र न्यायाधीश को ही किया जाना चाहिए जब तक कि सरकार धारा 228ए (1) (सी) के तहत कार्य नहीं करती है और ऐसे सामाजिक कल्याण संस्थानों या संगठनों की पहचान करने हेतु हमारे निर्देशों के अनुसार एक मानदंड निर्धारित करती है।

8. पॉक्सो के तहत नाबालिग पीड़ितों के मामले में, उनकी पहचान के प्रकटीकरण की अनुमति केवल विशेष न्यायालय द्वारा दी जा सकती है, अगर ऐसा प्रकटीकरण बच्चे के हित में हो।

9. सभी राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों से आज से एक साल के भीतर प्रत्येक जिलों में कम से कम एक 'वन स्टॉप सेंटर' स्थापित करने का अनुरोध किया जाता है।

44. इस निर्णय की एक प्रति सभी उच्च न्यायालयों के महापंजीयक को भेजी जाए ताकि उन्हें उचित आदेशों और निर्देशों को निर्गत करने के लिए सभी उच्च न्यायालयों की किशोर न्याय समिति के अध्यक्षों के समक्ष रखा जा सके और यह भी सुनिश्चित किया जा सके कि प्रत्येक जिले में वन स्टॉप सेंटर स्थापित करने के लिए ईमानदारी से प्रयास किए जाएं।

45. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, जहां तक उपरोक्त मुद्दों का संबंध है, हम इन याचिकाओं का निपटारा करते हैं।

संलग्नक-1

(बिजोय बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, 2017 आपराधिक विधि पत्रिका 3893 के मामले में कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा निर्गत निर्देश)

1. पुलिस अधिकारी या अधिनियम के तहत अपराध करने या होने की संभावना के बारे में शिकायत प्राप्त करने वाली विशेष किशोर पुलिस इकाई अधिनियम की धारा 19 के संदर्भ में तुरंत इसे पंजीकृत करेगी और बच्चे और/या उसके माता-पिता को निःशुल्क एक प्रति उपलब्ध करेगी और बच्चे या उसके माता-पिता या किसी भी व्यक्ति को सूचित करेगी जिसपर बच्चे को कानूनी सहायता और प्रतिनिधित्व के अपने अधिकार पर भरोसा हो और यदि बच्चा अपने कानूनी प्रतिनिधित्व की व्यवस्था करने में असमर्थ है, तो बच्चे को अधिनियम की धारा 40 के तहत आवश्यक कानूनी सहायता/प्रतिनिधित्व के लिए जिला विधिक सेवा प्राधिकरण को भेजें। पॉक्सो की धारा 4,6,7,10 और 12 के तहत दंडनीय अपराधों के संबंध में प्रथम सूचना प्रतिवेदन दर्ज करने में विफलता भारतीय दंड संहिता की धारा 166-बी के तहत दंडात्मक दायित्व को आकर्षित करेगी क्योंकि उपरोक्त अपराध उक्त

दंडात्मक प्रावधान में निर्दिष्ट दंड संहिता के अपराधों के सजातीय और/या समान विषय-वस्तु हैं।

2. एफ.आई.आर. दर्ज करने पर पुलिस अधिकारी बच्चे को तत्काल आपातकालीन चिकित्सा सहायता के लिए, जब भी आवश्यक हो, और/या अधिनियम की धारा 27 के तहत चिकित्सीय परीक्षण के लिए तुरंत भेजेगा और अधिनियम की धारा 25 के तहत दंडाधिकारी के समक्ष पीड़िता का बयान दर्ज करना सुनिश्चित करेगा। इस स्थिति में, पुलिस अधिकारी या विशेष किशोर पुलिस इकाई की राय है कि बच्चा किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2000 की धारा 2 (डी) के तहत परिभाषित "देखभाल और संरक्षण की आवश्यकता वाले बच्चे" की परिभाषा के अंतर्गत आता है, [जैसा कि किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015 (एस. आई. सी.) द्वारा उपयुक्त रूप से संशोधित किया गया है] तो उक्त पुलिस अधिकारी या विशेष किशोर पुलिस इकाई कानून के अनुसार बच्चे की देखभाल, सुरक्षा, उपचार और पुनर्वास प्रदान करने के लिए बच्चे को तुरंत अधिकार क्षेत्र वाली बाल कल्याण समिति को भेजेगी।

3. जब भी विशेष न्यायालय को एफ.आई.आर. दर्ज करने की सूचना दी जाती है, तो विशेष न्यायालय उपरोक्त (1) और (2) में उल्लिखित कानून की उपरोक्त आवश्यकताओं के अनुपालन के बारे में अन्वेषण निकाय से उचित जाँच पड़ताल करेगा और यदि आवश्यक हो तो विधि के अनुसार इसका अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक आदेश पारित करेगा।

4. विशेष किशोर पुलिस इकाई सहित मामले में पुलिस थाने के प्रभारी अधिकारी और अन्वेषण अधिकारी यह सुनिश्चित करेंगे कि अन्वेषण के दौरान पीड़िता की पहचान को प्रकट ना किया जाए, विशेष रूप से अधिनियम की धारा 24 के तहत पीड़िता का बयान दर्ज करते समय (जो यथासंभव पीड़िता के निवास या उसकी पसंद के स्थान पर या उसके माता-पिता/संरक्षक,के स्थान पर किया जा सकता है, जैसा भी मामला हो), अधिनियम की धारा 25 के तहत दंडाधिकारी के समक्ष उसका परीक्षण, धारा 19 (5) के तहत बच्चे को आपातकालीन चिकित्सा सहायता के लिए अग्रेषित करना और/या अधिनियम की धारा 27 के तहत चिकित्सा परीक्षण।

5. अन्वेषण निकाय किसी भी मीडिया में पीड़िता की पहचान को प्रकट नहीं करेगी और यह सुनिश्चित करेगी कि न्याय के हित में विशेष न्यायालय की स्पष्ट अनुमति के अलावा किसी भी तरह से ऐसी पहचान को प्रकटित नहीं किया जाए। कानून की उपरोक्त

आवश्यकता के उल्लंघन पर पुलिस अधिकारी सहित कोई भी व्यक्ति पर उक्त अधिनियम की धारा 23 (4) के तहत अभियोजित किया जाएगा।

6. अधिनियम की धारा 37 के संदर्भ में मामले का विचारण बंद में अभिनिर्धारित किया जाएगा और पीड़िता के साक्ष्य को बिना किसी अनावश्यक विलम्ब के तुरंत दर्ज किया जाएगा और अधिनियम की धारा 36 में दिए गए प्रावधानों के अनुसार अभियुक्त व्यक्ति से पीड़िता को अलग करने की प्रक्रिया का पालन किया जाएगा। पीड़िता का साक्ष्य न्यायालय द्वारा माता-पिता, अभिभावक या किसी अन्य व्यक्ति की उपस्थिति में बाल- अनुकूल वातावरण में दर्ज किया जाएगा, जिसमें बच्चे को भरोसा और विश्वास हो,तथा बीच-बीच में अन्तराल दिया जाएगा और विशेष न्यायालय बच्चे से किसी भी तरह की बार-बार, आक्रामक या परेशान करने वाली पूछताछ की अनुमति नहीं देगा, विशेष रूप से उसके चरित्र हनन के बारे में, जो ऐसी परीक्षा के दौरान बच्चे की गरिमा को नुकसान पहुंचा सकती है। उपयुक्त मामलों में, विशेष न्यायालय बचाव पक्ष से प्रति-परीक्षण के दौरान घटना से संबंधित अपने प्रश्न लिखित रूप में न्यायालय को प्रस्तुत करने के लिए कह सकता है और बाद वाले ऐसे प्रश्न पीड़िता से ऐसी भाषा में पूछेगा जो पीड़िता को समझ में आए और सभ्य और गैर-आक्रामक तरीके से।

7. यदि पीड़िता विदेश में है या किसी दूर के स्थान पर रह रही है या अप्रत्याशित परिस्थितियों के कारण साक्ष्य दर्ज करने के लिए शारीरिक रूप से न्यायालय में उपस्थित होने में असमर्थ है, तो वीडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से उसका साक्ष्य दर्ज करने के लिए सहारा लिया जाएगा।

8. पीड़िता की पहचान विशेष रूप से उसका नाम, माता-पिता, पता या कोई अन्य विवरण जो ऐसी पहचान प्रकट कर सकता है, विशेष न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय में तब तक प्रकट नहीं किया जाएगा जब तक कि पहचान का ऐसा प्रकटीकरण बच्चे के हित में न हो।

9. एफ.आई.आर. दर्ज करके अधिनियम के तहत किसी भी अपराध के होने की जानकारी प्राप्त होने पर विशेष न्यायालय स्वयं या पीड़िता के आवेदन पर राहत या पुनर्वास के लिए बच्चे की तत्काल जरूरतों के बारे में जांच करेगा और राज्य और पीड़िता सहित राज्य एवं अन्य प्रभावित पक्षों को सुनवाई का अवसर देने पर अंतरिम मुआवजे और/या बच्चे के पुनर्वास के लिए उचित आदेश पारित करेगा। कार्यवाही के समापन पर, चाहे अभियुक्त दोषी ठहराया गया हो या नहीं, या उन मामलों में जहां अभियुक्त का पता नहीं चला है या फरार हो गया है, विशेष न्यायालय इस बात से संतुष्ट होने पर कि अपराध करने

के कारण पीड़िता को नुकसान या चोट लगी है, पीड़िता के पक्ष में न्यायसंगत और उचित मुआवजा प्रदान करेगा। मुआवजे की राशि पीड़िता को हुए नुकसान और चोट और लैंगिक अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम, 2012 के नियम 7 (3) में निर्धारित अन्य संबंधित कारकों को ध्यान में रखते हुए तय की जाएगी और पीड़ित प्रतिकर निधि में निर्धारित न्यूनतम राशि तक सीमित नहीं होगी। अंतरिम/अंतिम मुआवजे का भुगतान या तो पीड़ित प्रतिकर निधि या दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (एस. आई. सी.) की धारा 357 ए के तहत स्थापित किसी अन्य विशेष योजना/कोष या राज्य कानूनी सेवा प्राधिकरणों या जिला सेवा प्राधिकरण के माध्यम से लागू किसी अन्य कानून से किया जाएगा, जिसके हाथों में निधि सौंपी गई है। यदि न्यायालय तत्काल मामले में अंतरिम या अंतिम मुआवजा पारित करने से इनकार करता है तो वह ऐसा नहीं करने के अपने कारणों को दर्ज करेगा। इस प्रकार भुगतान किया गया अंतरिम मुआवजा अधिनियम की धारा 33 (8) के संदर्भ में विचारण के समापन पर विशेष न्यायालय द्वारा दिए गए अंतिम मुआवजे, यदि कोई हो, के साथ समायोजित किया जाएगा।

10. विशेष न्यायालय यह सुनिश्चित करेगा कि पॉक्सो के तहत मामलों में विचारण अनुचित रूप से लंबी न हो और अधिनियम की धारा 35 (2) के संदर्भ में पक्षकारों को अनुचित स्थगन दिए बिना अपराध का संज्ञान लेने के एक साल के भीतर यथासंभव शीघ्रता से विचारण का उपसंहार करने के लिए सभी उपाय करेगा।

दिव्या पांडे

अपील का निपटारा किया गया ।